हिन्दी प्रचार समाचार

वर्ष : 87, अंक : 9
सितंबर 2023

स्थापना : 1918

सभा के संस्थापक : महात्मा गांधी

Total No. of Pages 44

वार्षिक चंदा : ₹ 100/-

एक प्रति का मूल्य : ₹ 8/-

दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा, मद्रास

77वें स्वतंत्रता दिवस समारोह : 15 अगस्त, 2023

हिन्दी प्रचार समाचार

(राष्ट्रीय महत्व की संस्था, दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा का मुख पत्र)

दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा, मद्रास

(संसदीय अधिनियम 14 सन् 1964 द्वारा घोषित राष्ट्रीय महत्व की संस्था)

वर्ष : 87 अंक : 9 **सितंबर 2023**

संपादक

जी. सेल्वराजन

सह संपादक

डॉ. जी. नीरजा

neerajagurramkonda@gmail.com

प्रमाणित प्रचारक चंदा

₹ : 100/-

संपादकीय कार्यालय

दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा, मद्रास

टी. नगर, चेन्नै - 600 017

संपर्क सूत्र : 044 - 24341824

044 - 24348640

Website : dbhpscentral.org

You Tube Channel :

DBHPS, Central Sabha Chennai

Email : dbhpssahithyach17@gmail.com

संपादकीय

✦ देश को सिलने के लिए चाहिए एक सुई 4

धरोहर

✦ अखिल भारतीय माध्यम का उपयोग... स्व. डॉ. मोटूरि सत्यनारायण 07

आलेख

✦ लोकगीत और लोकनृत्य... डॉ. अमरसिंह वधान 11

✦ विज्ञान के क्षेत्र में हिंदी का उपयोग प्रो. रामचरण मेहरोत्रा 16

✦ पूर्वोत्तर भाषा साहित्य एवं संस्कृति डॉ. पी. ए. राधाकृष्णन 24

✦ मैथिलीशरण गुप्त के साहित्य में... डॉ. एम. लोकनाथन 35

कविता

✦ भ्रष्टाचार की दुर्गति होगी कब? बी.के. बालकृष्णन नायर 21

✦ तिल का ताड़ न कर नीलकंठ गोविन्दन 23

कहानी

✦ रुद्राक्ष (लघुकथा) बी. जयलक्ष्मी 22

पुस्तक समीक्षा

✦ उदासी के बीच जीने की राह... सन्तीप तोमर 29

परीक्षोपयोगी

✦ 'रश्मिरथी' काव्य में कृष्ण की... आर. सुंदरराजन 27

✦ विष्णु प्रभाकर कृत 'भीम और राक्षस'... डॉ. गुर्रमकोंडा नीरजा 33

✦ नमूना प्रश्न-पत्र (प्राथमिक) 37

✦ नमूना प्रश्न-पत्र (प्रवेशिका) 39

बूझो तो जानो 32

पत्रिका में प्रकाशित रचनाओं में व्यक्त विचारों का पूर्ण उत्तरदायित्व लेखक पर होगा।

संपादकीय ...

देश को सिलने के लिए चाहिए एक सुई

सितंबर! हिंदी प्रेमियों के लिए उत्सव का माहौल। पाठशालाओं, महाविद्यालयों, विश्वविद्यालयों, स्वैच्छिक संस्थानों, बैंकों, राजभाषा विभागों आदि में चारों ओर कोलाहल। न जाने कितनी तरह की प्रतियोगिताओं का आयोजन किया जाता है। अवसर है 'हिंदी दिवस'। आखिर हिंदी दिवस को इतना महत्व क्यों दिया जाता है! कभी सोचा है।

14 सितंबर, 1949 को हिंदी ने भारत की राजभाषा का पद संवैधानिक रूप से प्राप्त किया। पहली बार 14 सितंबर, 1953 को 'हिंदी दिवस' मनाया गया। तब से लेकर आज तक यह एक उत्सव के रूप में मनाया जाता है। भारत एक उत्सवधर्मी देश है। हर महीने कोई न कोई त्योहार होता ही है। छोटी-छोटी उपलब्धियों को भी उत्सव के रूप में मनाकर भारत के लोग आपस में भाईचारा कायम रखते हैं। ऐसे ही सितंबर में सभी हिंदी प्रेमी 'हिंदी दिवस' मनाने के लिए एकजुट हो जाते हैं।

हिंदी दिवस क्यों मनाते हैं, इसके पीछे निहित कारण हम सब जानते ही हैं। मैं तो बस यही कहना चाहूँगी कि इसे केवल एक औपचारिकता न समझा जाए। वैसे भी, हम दूसरे तमाम त्योहार क्यों मनाते हैं? क्योंकि हमारे हर त्योहार के पीछे कोई न कोई मूल्य अवश्य जुड़ा हुआ होता है। चाहे वह दीवाली हो या दशहरा, ईद हो या होली, बैसाखी हो या बड़ा दिन, ये त्योहार हमारे लिए केवल औपचारिक नहीं हैं। इनका संबंध हमारे जीवन मूल्यों से है। 15 अगस्त, 26 जनवरी और 2 अक्तूबर की तरह 14 सितंबर भी हमारा राष्ट्रीय पर्व है। और इस पर्व के मूल में जो मूल्य निहित है वह है 'भारतीयता' - 'राष्ट्रीयता'। भारतवर्ष की भावात्मक एकता। हमारा यह देश बहु-सांस्कृतिक और बहु-भाषिक है। हिंदी भारत की सामासिक एकता को अक्षुण्ण रखने का एक आधार है।

भौगोलिक रूप से हमारे बीच दूरियाँ बहुत हैं। लेकिन भावात्मक एकता के धरातल पर हम सब एक हैं। कहने का आशय है कि उत्तर के राज्यों और दक्षिण के राज्यों के बीच भौगोलिक दूर हो सकती है और है भी। इन भौगोलिक दूरियों के बावजूद यह पूरा देश भावात्मक रूप से एक सूत्र में जुड़ा हुआ है। इस भावात्मक एकता को मजबूत बनाने वाला तत्व है 'भाषा'। हिंदी एक ऐसी भाषा है जिसने संपूर्ण भारत को एक सूत्र में पिरोया और अंग्रेजों की दासता से भारत को मुक्त किया। विभिन्न भाषाएँ बोलने वाला और विभिन्न प्रांतों में बँटा हुआ भारत एक राष्ट्र बना और हिंदी इसकी राजभाषा बनी। उल्लेखनीय है कि भाषा के अभाव में न ही मनुष्य का अस्तित्व होता है और न ही देश का। इस संदर्भ में थोमस डेविड का कथन ध्यान खींचता है। उनका कहना है कि कोई भी देश राष्ट्रभाषा के बिना राष्ट्र नहीं कहला सकता। भाषा महज आदान-प्रदान या अभिव्यक्ति का साधन नहीं है अपितु वह मनुष्य की अस्मिता है। हिंदी एक ऐसी भाषा है जो एक साथ अनेक भूमिकाएँ निभा सकती है और निभा भी रही है। अर्थात जनभाषा, संपर्क भाषा, राजभाषा, राष्ट्रभाषा, शिक्षा की माध्यम भाषा, प्रौद्योगिकी की भाषा, बाजार-दोस्त भाषा, मीडिया भाषा आदि। साहित्यिक, सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक, धार्मिक और सांस्कृतिक सभी क्षेत्रों में हिंदी की भूमिका निर्विवाद है। महात्मा गांधी ने हिंदी की इस ताकत को पहचाना और 'स्वभाषा' को स्वराज्य के लिए अनिवार्य घोषित किया। उनकी यह मान्यता थी कि हिंदुस्तान की आम भाषा अंग्रेजी नहीं, हिंदी ही हो सकती है। क्योंकि अलग-अलग भाषा-भाषी

भी हिंदी में आसानी से बातचीत कर सकते हैं। अपने भावों को अभिव्यक्त कर सकते हैं। भाषा एक संवेदनशील वस्तु है। जरा सी गलती हो जाए, तो वह तोड़ने वाली शक्ति बन सकती है। आप जानते ही हैं, भाषा के नाम पर आपस में झगड़े होने से देश किस तरह टुकड़ों में बँट जाते हैं। इसीलिए कभी-कभी ऐसा भी लगता है कि भाषा के नाम पर राज्य बनना भाषा की नकारात्मक भूमिका है। किंतु इसके विपरीत भाषा की एक सकारात्मक भूमिका भी है। वह है जोड़ने की ताकत। हम सबको नकारात्मकता को छोड़कर इसी सकारात्मक तत्व को ग्रहण करना होगा। यह उचित भी है। अतः कहा जा सकता है कि 'हिंदी दिवस' भाषा के संबंध में सकारात्मक सोच के प्रति अपने आपको समर्पित करने का दिन है।

14 सितंबर, 1949 को जब भारतीय संविधान के निर्माताओं ने हिंदी को 'भारत संघ की राजभाषा' बनाया, तो वे इसे केवल 'राजकाज' की भाषा नहीं बना रहे थे, बल्कि भावात्मक एकता की भाषा बना रहे थे। इसीलिए उन्होंने दो और विशेष प्रावधान रखे। एक प्रावधान यह रखा कि अलग-अलग प्रांत अपनी-अपनी राजभाषाएँ रखने के लिए स्वतंत्र हैं। दूसरे, इन अलग-अलग राजभाषाओं को भावात्मक एकता की दृष्टि से जोड़ने के लिए अनुच्छेद 351 का प्रावधान किया गया। यह कहा गया कि हिंदी का विकास इस तरह से हो कि वह सामासिक संस्कृति (मिश्रित संस्कृति) का प्रतिबिंब बने। अतः हम सबको यह समझना जरूरी है कि हिंदी केवल राजभाषा नहीं है, बल्कि अलग-अलग भाषा और बोलियाँ बोलने वाले इस महान देश के लोगों को आपस में जोड़ने वाली एक सुई है। यहाँ मुझे तेलुगु कवयित्री एन. अरुणा की एक कविता याद आ रही है-

इंसानों को जोड़कर सी लेना चाहती हूँ
फटे भूखंडों पर
पैबंद लगाना चाहती हूँ
रफ़ू करना चाहती हूँ
चीथड़ों में फिरने वाले लोगों के लिए
हर चबूतरे पर
सिलाई मशीन बनना चाहती हूँ
असल में यह सुई
मेरी माँ की है विरासत
आत्मीयताओं के टुकड़ों से मिली
कंथा है हमारा घर
सीने का मतलब ही है जोड़ना
सीने का मतलब ही होता है बनाए रखना
माँ अपनी नज़रों से बाँधती थी
हम सबको एक ही सूत्र में
सुई की नोक चुभाकर
होती थी कशीदाकारी भलाई के ही लिए
नस्ल, देश और भाषाओं में विभक्त
इस दुनिया को

कमरे के बीचों-बीच ढेर लगाकर
प्रेम के धागे से सी लेना चाहती हूँ (एन. अरुणा, मौन भी बोलता है)

सुई की तरह ही हिंदी भाषा किसी और भाषा की पहचान के लिए खतरा पैदा नहीं कर सकती। बल्कि यह उन सबको आपस में जोड़ती है। क्या आप बता सकते हैं कि घड़ी, गाड़ी, टीवी, कंप्यूटर, मोबाइल, उपग्रह आदि चीजों को कैसे बनाया जाता है? जी हाँ, टुकड़ों में। टुकड़ों को असेम्बल करके जोड़ा जाता है। तभी उत्पाद तैयार होकर हमारे सामने आएगा। कहने का आशय है कि अलग-अलग टुकड़ों को असेम्बल करते हुए किसी भी उपकरण का निर्माण किया जाता है। अगर इन टुकड़ों को अलग-अलग ही रहने देंगे तो क्या उपकरण बनेगा! नहीं। इसी प्रकार राष्ट्र के निर्माण में वह जो प्राण तत्व है, आत्मा है, जो दिखाई नहीं देती, वह है हमारी संपर्क भाषा। इस संपर्क भाषा के द्वारा ही सारी भाषाएँ जुड़कर 'भारतीय चिंतन की भाषा' का निर्माण करती हैं। इसी भाषा को राजभाषा के रूप में स्वीकार किया गया है। अतः हम सब मिलकर यह संकल्प लें कि असेम्बल करने वाले इस तत्व को कभी भी खत्म नहीं होने देंगे। हिंदी भाषा की सीमेंटिंग पावर को पहचानकर उसके साथ जुड़ेंगे। हिंदी के वैश्विक विस्तार हेतु विचारणीय बिंदुओं के संबंध में आज सोशल मीडिया के माध्यम से काफी कुछ कहा जा रहा है। 'वैश्विक हिंदी सम्मेलन' (हिंदी तथा भारतीय भाषाओं के प्रयोग व प्रसार का मंच) एक ऐसा सक्रिय मंच है जिसके माध्यम से आम जनता हिंदी भाषा के संबंध में अपने विचार व्यक्त कर पा रही है। हिंदी दिवस के हवाले से यहाँ विभिन्न लोगों द्वारा सुझाए गए कुछ बिंदु पाठकों के विचारार्थ प्रस्तुत हैं-

- अनेक कंप्यूटर-साधित सॉफ्टवेयर बनाए जाएँ जिससे हिंदी का प्रचलन और भी आसान हो सके।
- विभिन्न संगठनों द्वारा विकसित भाषा-उपकरण न सिर्फ सरकारी दफ्तरों तक सीमित हों अपितु उन्हें जन-मानस के लिए सुलभ कराया जाए। भारत सरकार के सभी कार्यालयों, मंत्रालयों, विभागों आदि का कामकाज प्रथम राजभाषा हिंदी में नोट शीट से लेकर सभी विधेयक तक बिना विलंब प्रारंभ कर दिया जाय।
- हिंदी सिर्फ एक सरकारी भाषा बनकर न रह जाए अपितु लोग उसे सहर्ष स्वीकारें। हिंदीतर भाषियों को इस प्रकार प्रेरित करना चाहिए कि वे हिंदी को सहर्ष ही अपने आप स्वीकारें।
- इंडिया हटाओ 'भारत' बनाओ।
- न्याय के क्षेत्र में सर्वोच्च न्यायालय तक अपील तथा बहस की सुविधा हिंदी में भी उपलब्ध करा दी जाए।
- सभी कक्षाओं में शिक्षा का माध्यम भारतीय भाषाओं को बिना विलंब बनाने का समय आ गया है।
- देश में देवनागरी लिपि के लिए अंग्रेजी भाषा की लिपि का उपयोग तेज़ी से बढ़ाया जा रहा है। यह हिंदी की लिपि देवनागरी के अस्तित्व पर संकट पैदा कर रहा है। इसे हतोत्साहित करना चाहिए।

अंततः इतना ही कि अब समय आ गया है कि हिंदी को उसका सही सम्मानपूर्ण वैश्विक स्थान प्रदान कराने के लिए सभी भारतवासियों को नवीनतम भाषा प्रौद्योगिकी से सुसज्जित होकर भाषाभिमान का परिचय देना चाहिए।

(सह संपादक)

अखिल भारतीय माध्यम का उपयोग अवश्य बढ़ेगा

- स्व. डॉ. मोटूरि सत्यनारायण

दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा (आंध्र) की रजत जयंती के अवसर पर 22 जुलाई, 1963 को हैदराबाद में आयोजित आंध्र प्रदेश हिंदी प्रचारक सम्मेलन में श्री मोटूरि सत्यनारायण द्वारा दिया गया अध्यक्षीय भाषण

बहनो और भाइयो!

आंध्र प्रदेश हिंदी प्रचारक मंडली की तरफ से निमंत्रित दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा (आंध्र) की रजत जयंती के अवसर पर समाविष्ट इस हिंदी प्रचारक सम्मेलन के अध्यक्ष-पद पर बैठने का अवसर प्राप्त होना मैं अपना अहोभाग्य समझता हूँ। एक पुराने हिंदी प्रचारक को जिसने 40 वर्ष से अधिक समय इस आंदोलन को अधिक तीव्र करने में लगाया, इस अवसर पर याद करने के लिए और इस महत्वपूर्ण स्थान पर बैठने का निमंत्रण देने के लिए इस सम्मेलन की स्वागत समिति के कार्यकर्ताओं को मैं हृदय से धन्यवाद देता हूँ। कुछ वर्ष हुए, हमने आंध्र प्रदेश के हिंदी प्रचार आंदोलन को दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा के नाम से चलाने का निश्चय किया था। जिस प्रदेश के लोगों ने आंध्र प्रदेश के नाम से 'आंध्र' शब्द में अपना तादात्म्य देखकर उस शब्द में अपनी सारी संस्कृति और अस्मिता देखी, उस प्रदेश की अपनी संस्था का नाम 'आंध्र' से 'दक्षिण भारत' में परिवर्तित करने का निश्चय क्यों किया, इसपर कुछ लोगों ने यह संदेह भी किया कि इसमें आंध्र को विशेष लाभ हो सकता है कि नहीं। लेकिन, इस परिवर्तन के मूल में विशेष रूप से अपने को रखने के कारण मैं उसपर कुछ प्रकाश डालना अपना कर्तव्य समझता हूँ।

हिंदी प्रचार के आंदोलन को उत्तर और दक्षिण को जोड़नेवाली एक कड़ी के रूप में हम लोग देखने आए। एक कारण इसका यह भी था कि समूचे उत्तर भारत को हमने हिंदी भाषा-भाषी के रूप में देखा और दक्षिण भारत को हमने अहिंदी भाषा-भाषी के रूप में। इस रूप में देखने के कारण हम नहीं थे, किंतु, उत्तर भारत के निवासी थे। उनको यह पता नहीं था कि दक्षिण भारत में भी चार भाषाएँ हैं जिनकी अपनी-अपनी प्राचीन संस्कृति, साहित्य और इतिहास हैं। इस स्थिति को समझाने के वास्ते ही दक्षिण भारत के लोगों ने भाषा के आधार पर राज्यों की पुनर्व्यवस्था का आंदोलन किया। इस आंदोलन में हम लोग सफल हुए। आंध्र को अपना पृथक राज्य मिला और वह राज्य दक्षिण भारत में सबसे बड़ा है और क़रीब-क़रीब इसका उतना ही रक़बा है जितना क़रीब क़रीब शेष तीनों राज्यों को मिलाने पर बन सकता है। उत्तर भारत से सटे हुए और उसकी संस्कृति और साहित्य से संबंधित होने के कारण और दक्षिण भारत का प्रारंभिक पड़ाव होने के कारण दक्षिण भारत का सच्चा प्रतिनिधित्व आंध्र ही कर सकता है- इसमें दो रायें नहीं हो सकतीं। ज़माने से और मध्य युग में भी आंध्र का प्रदेश दक्खन के रूप में प्रचलित था। यह हैदराबाद शहर जहाँ पर हम लोग आज एकत्र हुए हैं, 'हैदराबाद-दक्खन' कहलाता था। उत्तर भारत के मुस्लिम नवाबों ने इसी प्रदेश को दक्खन का आरंभ और दक्खन का प्रतिनिधि भी समझा। उस हालत में दक्षिण भारत का पहला केंद्र

हैदराबाद होना वाजिब और ज़रूरी था। दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा का प्रधान केंद्र जो अब तक मद्रास में रहा, उसका कारण भूगोल नहीं, बल्कि राजनैतिक इतिहास है। एक ज़माना था जब कि मद्रास दक्षिण भारत का प्रतिनिधित्व करता था, क्योंकि, वह दक्षिण के चारों भाषा-भाषी राज्यों की राजधानी था। भाषावार राज्यों के बन जाने के बाद वह प्रतिनिधित्व मद्रास का उस अंश में नहीं रहा जिस अंश में पहले मिल सकता था। इसलिए दक्षिण भारत के नाम से जो शक्ति, प्रतिष्ठा और प्रतिनिधित्व मिल सकता था, उसका समान रूप से चारों प्रांतों में विभक्त होना बहुत ज़रूरी था। इसी कारण दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा की शक्ति, प्रतिष्ठा और प्रतिनिधित्व का बँटवारा हुआ; चारों प्रांतों की सभाओं के नामकरण में यह परिवर्तन हुआ।

आज दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा (आंध्र) के नाम से जो सभा काम कर रही है, उसके प्रारूप, वर्तमान रूप और भविष्य के रूप का विवरण, वर्णन और व्यापन- उसीमें हमारे कार्य का भविष्य निहित है। अर्थात्, हम अपनी भारतीय संस्कृति का प्रथम साक्षात्कार अपनी भाषा में, उसका व्यापक साक्षात्कार और उसका समन्वित साक्षात्कार प्राचीन व आधुनिक सांस्कृतिक समन्वय में देखना चाहते हैं; और किसी भी हालत में इन रूपों, प्रतिरूपों में कोई भी संघर्ष नहीं देखना चाहते हैं और जहाँ संघर्ष हो, वहाँ सामंजस्य पैदा करना चाहते हैं। जहाँ सामंजस्य हो, वहाँ समन्वय पैदा करना चाहते हैं; जहाँ समन्वय हो, उसमें एकीकरण पैदा करके उसमें अपनी अस्मिता देखना चाहते हैं। इसी तरह की महान् भावना को लेकर हमने सन् 1918 में हिंदी आंदोलन शुरू किया और अब तक उसको चलाया। इन 45 वर्षों में हमने इस समय उसको ऐसी स्थिति पर पहुँचाया जहाँ पर खड़े होकर हम समूचे हिंदुस्तान के सांस्कृतिक, साहित्यिक तथा भावना संसार के क्रियात्मक कार्यों का सिंहावलोकन करना चाहते हैं, जिससे हमें पता लग जाए कि हमें आगे क्या करना है।

स्वराज्य प्राप्त होने के बाद इस देश में जो उथल-पुथल कार्य-कलाप गढ़े, उनके महत्व पर विचार करना मेरा यहाँ उद्देश्य नहीं। उन महान कार्यों में भाषा क्षेत्र में क्या-क्या हुआ, और उस क्षेत्र में होनेवाले कार्य-कलापों के साथ हमने अपने को कहाँ-कहाँ जोड़ा, कहाँ जोड़ना बाकी रहा, इसपर संक्षेप में विचार करना होगा और उसपर अपने अनुभव कुछ आपके सामने रखने का मैं प्रयास करूँगा।

संविधान सभा में हिंदी को राजभाषा के पद पर प्रतिष्ठित किया गया था और हिंदी के विकास, प्रसार और प्रचार के क्षेत्र की रूपरेखा खींची गई। वह रूपरेखा संविधान की धारा 351 में पूरी तरह से विवरित है। जिस रूपरेखा के संवरण में महान संघर्ष पैदा हुआ, उसके स्मरण से ही हमें यह स्पष्ट हो जाएगा कि भारतीय भाषाओं के बीच में एक ज़माने में संघर्ष था, उनके स्वरूप में भिन्नता दीखती थी, उसके प्रचलन और प्रयोग में हम अस्पष्टता देखते थे। वे सारी बातें अब करीब क़रीब दूर हो गईं। हमारे सामने यह स्पष्ट आ गया और यह चित्र पिछले राजभाषा आयोग के बाद और राष्ट्रपति के आदेश के उपरांत और भी स्पष्ट हो गया कि अब हमें एक-दूसरे के बीच में संघर्ष नहीं पैदा करना है, बल्कि समन्वय ही पैदा करना है। इस संघर्ष को दूर करने और समन्वय पैदा करने के वास्ते हमें एक माध्यम और मिला और उस माध्यम के संबंध में विभिन्न लोगों के बीच में विभिन्न विचार हैं। वह माध्यम है अंग्रेज़ी। अंग्रेज़ी को साथ रखकर हिंदी के

अखिल भारतीय स्वरूप को बढ़ाने और उसे राजभाषा के रूप में प्रयुक्त करने के लिए हमें क्या-क्या करना चाहिए, इनका विवरण ही हमारे कर्तव्यों की रूपरेखा है। इसके साथ प्रादेशिक भाषाएँ तथा अखिल भारतीय हिंदी के बीच में कैसा समन्वय पैदा करना है, यह भी हिंदी प्रचारकों के कर्तव्यों के अंदर आ जाता है। यह स्पष्ट है आज भारतीय एकता पहले की अपेक्षा ज़्यादा मज़बूत है। यह भी स्पष्ट है कि इस एकता के बल पर भारत एक महान राष्ट्र बनेगा; बलवान बनेगा और अपनी शक्ति से अपने प्रभाव का क्षेत्र अपनी सीमाओं के अन्तर्गत ही नहीं, बल्कि सीमाओं के बाहर भी फैलेगा। और यह भी स्पष्ट है कि भाषाओं की या अन्य छोटी-मोटी प्रादेशिकताओं की सीमाओं में बँधकर भारत कमज़ोर ही रहेगा और बलवान होकर विश्व के राष्ट्रों में अपना शक्तिवान स्थान प्राप्त करने का स्वप्न नहीं देख सकेगा। इस कार्य में हम हिंदी प्रचारक क्या कर सकते हैं, यह भी हमारे सामने एक बहुत बड़ी समस्या है।

हिंदी प्रचारकों की सामूहिक शक्ति या व्यक्तिगत शक्ति आज उस हद तक नहीं बढ़ी है जिस हद तक बढ़नी चाहिए, या जिस हद तक बढ़ने से ही राष्ट्रीय शक्ति का लाभ उनको मिल सकता है। इसका एक मुख्य कारण यह भी है कि उस कार्य के लिए सरकार की तरफ़ से जो योग, सहयोग या सहायता प्राप्त होनी चाहिए वह उस मात्रा में नहीं मिल रही है जिस मात्रा में मिलनी चाहिए थी। इसके पूरे कारण क्या हैं, उनके ब्यौरे में नहीं जाना चाहता हूँ। इस समय में इतना ही कहना चाहूँगा कि हमारी संगठन शक्ति जिस हद तक बढ़नी चाहिए थी, बढ़ी नहीं। इसलिए हमारे सामूहिक बल में बड़ी कमज़ोरी आई है। इस कमज़ोरी को दूर करने के लिए हम बहुत कुछ कर सकते थे, लेकिन हमारे बीच में एकता, संगठन न होने के कारण इस कार्य को हम नहीं कर पाए। इसके लिए पूरा दोषी मैं हिंदी प्रचारकों को नहीं ठहराना चाहता हूँ। इसके लिए दोषी वे लोग हैं जिनके सहारे हम अपनी शक्ति बढ़ाना चाहते थे, अर्थात् राजनैतिक नेता, सामाजिक नेता, सांस्कृतिक नेता। उनको हम अपने साथ लेकर अपने कार्य को इतना नहीं कर पाए, जिससे कि हमारी शक्ति का पूरा उपयोग उनको मिले और उनकी शक्ति का पूरा उपयोग हिंदी प्रचारकों को मिले। इसलिए यहाँ मैं ऐसी आशा रखता हूँ कि सरकारी भाषा-विधेयक पारित होने के बाद हमारे सामने एक नई परिस्थिति उत्पन्न हुई है जिसका पूरा फ़ायदा हम स्वयं भी उठा सकेंगे और सरकार भी हमारे द्वारा कुछ काम करा सकेगी।

मैं हमेशा यह मानता आया हूँ कि हिंदी प्रचार का कार्य चतुर्मुखी है। मेरे विचार में उसका पहला रूप अखिल भारतीय स्तर पर हमारे सामाजिक, व्यापारिक और व्यावहारिक कार्यकलाप के लिए है। उसका दूसरा रूप हमारे अंतरप्रांतीय साहित्य के आदान-प्रदान और सांस्कृतिक सामंजस्य और साहित्यिक प्रस्फुटन के लिए है। उसका तीसरा रूप हमारे प्रादेशिक, साम्प्रदायिक संघर्षों को दूर कर उनमें सांस्कृतिक कार्य-कलापों के द्वारा विशाल तथा व्यापक रूप में निहित छोटी-छोटी शक्तियों के सम्मिलन से विशाल माध्यम बनकर देश की एकता को दृढ़ करने के लिए है। चौथा रूप उसके अखिल भारतीय शासन के लिए एक बहुत ज़बर्दस्त माध्यम शासन के लिए प्रतिनिधित्व-पूर्ण और शक्तिशाली रूप प्राप्त कर देश-भर में प्रयुक्त होने के लिए है। हिंदी प्रचारक इस चतुर्मुखी रूप से बहुत ही अच्छी तरह परिचित हैं। इन चारों क्षेत्रों में वे किसी-न-किसी तरह भाग लेते भी आए हैं। लेकिन उन्होंने अत्यधिक समय तथा शक्ति पहले रूप

के प्रस्फुटन तथा प्रचार के लिए ही लगाई है और बाकी तीनों रूपों में भी जब तक वे उसी उत्साह और सामर्थ्य के साथ ऊँचे पैमाने पर काम करने का प्रयत्न नहीं करेंगे, तब तक हिंदी प्रचार के आंदोलन का प्रतिनिधित्व प्राप्त करने का अधिकार उन्हें नहीं मिलेगा।

भारतीय भाषाओं के अपने-अपने राज्य प्राप्त करने के बाद कुछ लोग यह मानते आए हैं कि अब हिंदी का पहले जैसा क्षेत्र नहीं रहा। जब प्रत्येक भाषा अपने-अपने क्षेत्र में फैलती जाएगी, उस हालत में प्रांतों में हिंदी का क्या कार्य होगा? ऐसा समझने वालों के सामने यह ख्याल स्पष्ट रूप से नहीं आता कि हिन्दुस्तान इस समय पहले का जैसा नहीं है। उसके पढ़े-लिखे युवक लाखों की तादाद में अपने प्रांतों की सीमाओं को लाँघकर दूसरे प्रांतों में कितनी ही तरह के कार्यों में लग जाने लगे हैं कि आज देश-भर के कार्यकलाप का मूल्यांकन किया जाए तो इस समय स्वराज्य की प्राप्ति के पहले की स्थिति से 20-25 गुना अधिक व्यापक है। यह पता चलेगा कि लाखों लोग अपने-अपने प्रांतों को छोड़कर अपने कार्य को फैलाने के लिए, अपने वैयक्तिक उपयोग एवं विकास के लिए दूसरे प्रांतों में निवास करने लगे हैं। यह स्पष्ट है कि यह कार्य आगे बढ़ता चला जाएगा। इसको और भी स्पष्ट करने लिए यह कहा जाता है कि आज केंद्र सरकार के द्वारा नियुक्त सरकारी नौकरों की संस्था किसी भी प्रांत में प्रादेशिक सरकार द्वारा नियुक्त होनेवालों की संस्था से कुछ अधिक ही है; किसी भी हालत में कम नहीं है।

आंकड़े इन बातों के सबूत में आसानी से दिए जा सकते हैं। इसका मतलब यह है कि जब हमारी अखिल भारतीय सेवा का क्षेत्र बढ़ता चला जाएगा, तो अखिल भारतीय माध्यम का उपयोग भी अवश्य बढ़ता चला जाएगा। यह सिर्फ सरकारी काम-काज के रूप में ही नहीं, बल्कि गैर-सरकारी काम-काज के रूप में भी प्रतिदिन विस्तृत होता जा रहा है। तो क्या ऐसी हालत में प्रादेशिक, अंतर-प्रादेशिक तथा सार्वदेशिक कार्यक्षेत्र की सीमा खींची जा सकती है? किसी भी हालत में वह भविष्य में संभव ही नहीं होगा। ऐसी हालत में इन तीनों स्थितियों को सामने रखकर ही अपने क्षेत्र का हमें अध्ययन करना है। इन तीनों क्षेत्रों को स्पष्ट रूप में जनता के सामने रखना ही सरकारी भाषा-विधेयक का मुख्य उद्देश्य है। यह स्पष्ट है कि अब तक यह कार्य सीमित क्षेत्र में अंग्रेज़ी के द्वारा हम करते आए हैं। यह क्षेत्र दिन-प्रतिदिन बढ़ रहा है। यह सम्भव नहीं कि एक ग़ैर-भारतीय भाषा- अंग्रेज़ी-हमारे इस बढ़नेवाले क्षेत्र के साथ होड़ कर सके और हमारे लिए उपयोगी माध्यम बन सके। यह भी सम्भव नहीं कि अंग्रेजी हमारी सार्वदेशिक तथा प्रादेशिक माध्यम, इन दोनों को साथ लेकर अपने को बढ़ा सके।

(साभार : अगस्त 1963 'हिंदी प्रचार समाचार')

मनुष्य अपना निर्माण स्वयं करे, अपना उद्देश्य स्वयं निश्चित करे - इसके लिए दो बातें आवश्यक हैं। उसे अपनी क्षमता का सही ज्ञान होना चाहिए और जिन परिस्थितियों में उसे अपना उद्देश्य चरितार्थ करना है, उनका सही ज्ञान होना चाहिए। उसे अपनी क्षमता का सही ज्ञान न हो, तो अपने मन में वह अपने उद्देश्य को चाहे जितना सही समझे, वह उसे ठीक-ठीक जीवन में चरितार्थ कभी न कर पाएगा। ***- रामविलास शर्मा***

लोकगीत और लोकनृत्य : एक पुनर्मूल्यांकन

- डॉ. अमरसिंह वधान

इतिहास गवाह है कि मानवीय सभ्यता के शुरूआती दौर में आदिमानव को वन्य परिवेश में रहते हुए अपने सार्थक अस्तित्व के लिए मानवेतर शक्तियों से जूझना और टकराना पड़ा। लेकिन संयोग से कुदरती ताकतों के विरुद्ध उसका घोर संघर्ष अपनी ज़िंदगी को सुखी, मनोरंजनपूर्ण और अर्थवान बनाने के मकसद से प्रेरित था। उसने पक्षियों से मधुर कलरव, प्रपातों के कर्णप्रिय संगीत, हवाओं का हुक्म मानकर नृत्य करती पेड़ों की डालियाँ, आहिस्ता से खिलते फूलों पर मंडराते भौंरों की सुरीली गुनगुनाहट, पौधों के पत्तों पर गिरती बारिश की बूँदों से उत्पन्न हृदयस्पर्शी सुर, वन-प्राणियों की भिन्न-भिन्न चीखें, मधुमक्खियों की भिनभिनाहट, सफेद चादर ताने पर्वत चोटियाँ आदि को देखा, परखा और समझा। इसी कुदरती नूरमयी नज़ारे से आनंदित वनमानव के भीतर अनुकरण सिद्धान्त जन्म लेता है और वह शनैः शनैः अपनी लोकरंजकतापूर्ण दुनिया आबाद करता है। इसी स्वतंत्र प्राकृतिक वातावरण में अंकुरित उद्‌गार एवं थिरकनें उसके शाश्वत लोकगीतों, लोकनृत्यों, कथाओं और गाथाओं का सरमाया बन गए।

यहाँ एक मनोवैज्ञानिक इशारा करना ज़रूरी है कि उस वन्य नागरिक के पास नैसर्गिक चीजों के रहस्य को समझने एवं पहचानने की बुद्धि थी और सामूहिक मनोरंजन के महत्व को भी वह अपने दृष्टिकोण से जान गया था। ज़ाहिराना तौर पर 'लोकसाहित्य' के तमाम हिस्सों की प्रेरणा मानव को प्रकृति से ही मिली है, जो उसके लिए सदैव एक शिक्षिका, जननी, सेविका, मार्गदर्शिका तथा रक्षक बनी रही। कमाल यह है कि इस वनमानव ने गायन, नृत्य, कथा-गाथा की कहीं से तालीम हासिल नहीं की। अचरज तो इस बात में भी नहीं कि मानव हृदय की हर धड़कन एक गीत है, बदन की हर अंगड़ाई एक नृत्य है, हर साँस एक लय है और हर घटना एक गाथा है। गीत तो विश्व मानवता को लिखे खत हैं। वक़्त के नाम लिखे ये गीत मन की रंग-बिरंगी तस्वीरें हैं, जिनमें अतीत, वर्तमान और भविष्य स्पंदित हैं। हर्ष, अमन, संस्कार एवं जीवन संघर्ष के इस संधिपत्र पर इन गीतों के सर्जकों के सुर्ख दस्तखत हैं। ये गीत सवाल का जवाव बनते हुए खामोशी का अर्थ भी समझा जाते हैं। धरती से इनकी दीवानगी को नापना कठिन है। हर मौसम के पैरों की आहट और हर पर्व-त्योहार की दस्तक ये लोकगीत और लोकनृत्य चुपके से सुन लेते हैं। चकित करने वाली बात यह है कि अनगिनत लोकगीतों के इस विशाल भंडार को न तो एक सेंटीमीटर ज़मीन की ज़रूरत पड़ी और न ही पोर भर कागज के पुर्जे की। जो रचा गया, सब लोगों के मन में अंकित, सुरक्षित एवं झंकृत है।

इस कड़वे सत्य से किसी का माथा ठनक सकता है कि वैश्विक स्तर पर ज़िम्मेदार विद्वानों एवं गीत-नृत्य संग्रहकारों ने अपनी सोच के संकुचित लेंस से लोकसाहित्य के अन्यान्य प्रकारों के जन्मदाता को असभ्य, कमतर मानव ही ठहराया है, जबकि इसी आदिमानव-आदिवासी के पास ग़ज़ब का रचनात्मक मस्तिष्क है। वह प्रकृति की हर अंगड़ाई एवं मौसम की करवट को समझता आया है और जिसने बिना श्रेय

लिए करोड़ों लोकगीत विश्व की झोली में डाल दिए। बड़ी से बड़ी विश्व की सांख्यिकीय संस्थाएँ तथा सर्वेक्षणकर्ता आज तक वैश्विक स्तर पर लोकगीतों का पूर्णांक नहीं निकाल सके हैं, यह एक अलग हैरानगी की बात है। एक बड़ा सच बता दें कि वनवासियों की प्राकृतिक संवेदनाओं, प्रस्तुतियों, भावाभिव्यक्तियों, रचनात्मक कल्पनाओं, प्रवाहमयी अभिव्यंजनाओं को तथाकथित आधुनिकतम सभ्य मनुष्य छू नहीं सकता। इसी बिंदु से यक्ष सवाल उठते हैं कि मात्र अभावों, कष्टों तथा प्राकृतिक विपदाओं के प्रांगण में रहने-खेलने वाले आदिवासी मानव को 'असभ्य' कहना कहाँ की विवेकशीलता एवं समझदारी है। आज के बदलते परिवेश एवं राष्ट्रीय संदर्भों में 'असभ्य' और 'सभ्यमानव' को पुनः परिभाषित करने की आवश्यकता है।

खेद तो इस बात पर भी है कि आज के विज्ञापननुमा गीतकार को यह भी मालूम नहीं है कि उसके प्रदेश में कितने दरिया बहते हैं, कितना वर्ग किलोमीटर क्षेत्र वनों से आच्छादित है, कितना क्षेत्रफल कृषि लायक है, कितनी भूमि उपजाऊ है और कितनी बंजर है तथा कितनी किस्म के पेड़-पौधे हैं। ताज्जुब नहीं है कि प्रकृति के उस आदिपुत्र एवं गीत-नृत्यों के अन्वेषक ने अपने नंगे पैरों से समूची धरती को नाप लिया था। मत भूलिए कि गँवारू, असभ्य एवं मामूली आदमी के पास चकित करने वाली रचनात्मक ऊर्जा एवं विरल-सी कला भी होती है। अफसोस है कि 21 वीं सदी में आकर अभी भी लोकसाहित्य के सिद्धांतवादी विद्वानों-लेखकों के अन्तःमन में 'असभ्य आदमी' पल रहे हैं, यह जानते हुए भी कि वनमानव ने अपना दिमाग प्रशस्तियाँ प्राप्त करने के लिए गिरवी नहीं रखा था। वह किसी मशीन का पुर्जा नहीं था, दोहरे तिहरे तनावों की गिरफ्त में नहीं था और न ही बिकाऊ था। उसमें विस्मय में डालने वाली चारित्रिक पवित्रता, सामूहिकता, सामाजिकता, सहृदयता एवं स्वाभाविकता थी। हैरत नहीं कि उसकी नृत्य कलात्मक क्षमता का मुकाबला आज भी अन्य जातियाँ नहीं कर पाती हैं। दुनिया के लिए गीत-नृत्यों को जिन्दा रखने वाले इन आदिमानवों पर पुनर्विचार समय की माँग है।

यह बताना भी लाज़मी है कि ब्रिटिश शासन के दौरान मॉरीशस, फीजी आदि देशों में भेजे गए भारतीय मजदूरों की ज़िंदगी की यातनाओं और यंत्रणाओं से राहत पाने के लिए गीत-नृत्यों ने ही वैद्य की भूमिका निभाई। उन्हें अपने 'श्रीराम' और आँचलिक यादों ने वहाँ जिन्दा रखा। यह भी स्वतः स्पष्ट है कि अन्य अनुशासनों की मानिंद गीत-नृत्य भी मानवीय चेतना का प्रतिफल है और सामाजिक-सामूहिक अस्तित्व के बिना मनुष्य की चेतना निर्धारित हो ही नहीं सकती है। यह भी जगजाहिर है कि रचनात्मक कल्पना और सामाजिक अस्तित्व की यात्रा आदिमानव से ही शुरू हुई है, जिसके संबंध में चार्ल्स डार्विन, कार्ल मार्क्स, मिशेल फूको आदि विचारकों ने लंबी-लंबी इबारतें लिखी हैं। यह धारणा भी निराधार नहीं है कि गीत-नृत्यों के निर्माण में वनमानव अथवा आदिवासियों की सामूहिक अनुभूति के रसायन तथा तत्कालीन परिवेशगत मानसिकता ने बड़ी रचनात्मक भूमिका निभाई है। यह जानना आश्चर्य में डालता है कि जब दुनिया सोती है तो चाँद-तारों तले मनोरंजकता के ये कोलंबस जागते हैं, दिन भर की समूची क्रियात्मक थकावटों, मानसिक तनावों, प्रतिक्रियाओं और अनुक्रियाओं को विस्मृत करते हुए। इनकी अपराजेय चेतना में अन्दरूनी ताप होता है जो संयमबद्ध तथा अनुशासनबद्ध होने के कारण कभी बागी नहीं

बनता। उन्हें नैसर्गिक वास्तविकता का बोध होता है, जिसकी वज़ह से वे मिथ्या धारणाओं की गिरफ्त में नहीं आते। इस विमर्श के नतीजे के तौर पर कहा जा सकता है कि लोकसाहित्य प्रायः सभी प्रकार के अनुशासनों की तरह मनुष्य की सामाजिक सामूहिकता की सत्ता से अभिन्न रूप से संबद्ध हैं और महानगरीय जीवन से सुदूर रहने वाले मनुष्य की पहचान को गहरे में पृष्ठांकित करते हैं। जरा कसकर कहा जाए तो तनावग्रस्त, मतवादी एवं प्रचारवादी आधुनिकतम जीवन पद्धति इन गीत-नृत्य नायकों की रंजकमयी उन्मुक्त सपाट जीवन शैली के सामने झुकती है।

यूँ तो लोकसाहित्य के भारतीय विद्वानों तथा पश्चिमी लेखकों ने अपने-अपने प्रदेश में लोकसाहित्य का गहन अध्ययन एवं संकलन कार्य किया है। 'लोक' शब्द की व्युत्पत्तिपरक व्याख्या करते हुए अनेक सैद्धान्तिक परिभाषाएँ प्रस्तुत की गई हैं। लोकसाहित्य के विभिन्न प्रकारों पर भी विस्तार से लिखा गया है। निस्संदेह, इस दिशा में इनके प्रयास सराहनीय हैं। लोकसाहित्य का अध्ययन एवं इसपर लेखन कार्य करने वाले कुछ चर्चित भारतीय विद्वान हैं- देवेन्द्र सत्यार्थी, डॉ. सत्येन्द्र, वासुदेवशरण अग्रवाल, डॉ. कुंजबिहारी दास, लक्ष्मीनारायण सुधांशु, रामनरेश त्रिपाठी, कृष्णदेव उपाध्याय, जगदीश त्रिगुणायत, सीताकान्त महापात्र, श्याम परमार, द.र.बेन्द्रे, चन्द्रशेखर कंबार, दुर्गा भागवत, कमलाबाई देशपांडे, काका कालेलकर, अनुसूया लिमये, वा.दा. मुंडले आदि। देवेन्द्र सत्यार्थी ने तो भारत के लोकगीतों को एकत्रित करने में पूरा जीवन ही लगा दिया। उनके एक लोकगीत की इन पंक्तियों 'रब्ब मोया देवते भज गए, राज फिरंगियों दा' (अर्थात्-ईश्वर मर गया देवगण भाग गए, अब शासन अंग्रेज़ों का है) को पढ़कर पंडित नेहरु ने गांधी जी से कहा था, 'मेरे और आपके सभी भाषण एक पलड़े में और दूसरे पलड़े में ये पंक्तियाँ रखें तो भी देवेन्द्र सत्यार्थी भारी पड़ता है।'

इसी सार्थक क्रम में पश्चिमी विद्वानों का जिक्र करना भी लाजमी है। मिसाल के तौर पर एलेग्जेंडर क्रॉप एवं विलियम जॉन टॉमस ने सर्वप्रथम 'फोक लोर' शब्द का प्रचलन किया। यहाँ संकेतित कर दें- भारत में 'फोक लोर' के क्षेत्र में विधिवत् शोध कार्य 19वीं सदी के उत्तरार्द्ध में यूरोपीय विद्वानों ने ही आरंभ किया। मेरी फियर ने 'ओल्ड डेक्कन डेज' कृति में महाराष्ट्र की लोककला, लोकगीत, लोककथाओं तथा ऐतिहासिक दंत कथाओं का संकलन करके भारतीयों को चकित किया। जार्ज ग्रियर्सन, रेवरेण्ड फादर बुकावट, डाल्टन, आर्चर, प्लिनी, टोलेमी, बिशप वेरसी, लोनार्ट इलियस, हैवमॉक ऐलिस, चार्ल्स बौडेलेर, टॉमस कैटले, मैक्समूलर आदि विद्वानों ने अपने-अपने अमुक अंचलों में लोकगीत-लोकनृत्यों का गहन गंभीर अध्ययन किया तथा लोकगीतों के कई संग्रह निकाले। विलियम ब्लैक के 'सोंग्स ऑफ इनोसेन्स' तथा 'सोंग्स ऑफ एक्सपीरिएन्स' गीत संग्रहों में कई लोकगीतों को शामिल किया गया। विलियम वर्डस्वर्थ की प्रारंभिक काव्य रचनाओं में अनेक लोकगीत मिलते हैं। सर वाल्टर स्कॉट ने अपनी ऐतिहासिक कृतियों में लोकगीतों का अपार श्रद्धा से प्रयोग किया। इन रचनाकारों ने धरती एवं प्रकृति से जुड़े इन लोकगीतों का दिलचस्पी एवं निष्ठापूर्वक अध्ययन तथा संकलन कार्य किया।

लोकसाहित्य के क्षेत्र में फ्रांसिस टर्नर पालग्रेव ने बड़े मार्के का काम किया। उसने 587 पृष्ठों की 'द

गोल्डन ट्रेजरी' शीर्षक पुस्तक में अनेक लोकगीतों, लोककथाओं, लघु एवं लंबी कविताओं का संकलन तैयार किया जिसका सन् 1861 में ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, लंदन द्वारा प्रकाशित किया गया। यह भी कि 'सोंग टू द मैन ऑफ इंग्लैंड' (पी. बी. शेली), 'स्टॉपिंग बाई वुड्स ऑन ए स्नोई ईवनिंग (रॉबर्ट फ्रॉस्ट), 'ला बेले डेम सान्स मर्सी' (जॉन कीट्स), 'द ब्रुक' (एल्फर्ड टेनिसन), 'सोंग' (सी.जी. रोसेटी), 'ए बॉय सोंग' (जेम्स हॉग), 'द मिल्कमेड' (जैफर्स टेलर), 'द सोलेटरी रीपर' (विलियम वर्डस्वर्थ) आदि लोकगीत यूरोपीय लोकसाहित्य की अमूल्य निधि हैं।

> लोकगीत एवं लोकनृत्य किसी एक धरती, किसी एक देश, किसी एक ज़बान या किसी एक कौम की जायदाद नहीं हैं। यह सरमाया है हर उस धरती का जहाँ धरती सागर की मानिंद विशाल होती है और जज्बातों से महकती है। ये संपत्ति हैं उस राष्ट्र की जहाँ अदब, संस्कृति और सभ्यता रात-दिन विकसित होते हैं, हर तरह की सरहदबंदी से मुक्त। ये अमूल्य कुबेर हैं उस ज़बान के जहाँ दिलों को सुनना भी आता है, देखना भी और पहचानना भी। ये लाड़ले हैं हर उस कौम के जिसके बाशिंदे निरे परिपूर्ण वर्तमान में जीते हैं और आज की तरह ही अपने आप जीते-जागते हैं।

यह भी कोई श्रेय देने वाली बात नहीं है कि लोकगीत एवं लोकनृत्य ज़्यादातर नारियों की मखमली कृतियाँ हैं। मनोवैज्ञानिक गवाही के मुताबिक पुरुषों की तुलना में नारी की स्मरण शक्ति अधिक दीर्घ एवं सघन होती है। उसका मस्तिष्क स्मृतियों का महाकोश है। इसमें नारी के रंगीन भावों, रेशमी संवेदनाओं और मुलायम कल्पनाओं का घुला गहरा रंग तथा उसकी साँसों की महक होती है। शायद ही जिंदगी का कोई ऐसा पक्ष हो, जिसके बारे में नारी ने गीत का सृजन एवं नृत्य की प्रस्तुति न की हो। सच्ची और कठोर वास्तविकताएँ, पीड़ाएँ, दर्द एवं वेदना उनके गीतों में बुलबुल के स्वरों में बोलती हैं। वैसे नारी का सबसे खूबसूरत रूप और प्रेम का चित्रण लोकगीतों में मिलता है। वह प्रेम में अपना सर्वस्व कुर्बान कर देना जानती है। अपने प्रियतम के बिना वह जी नहीं सकती। दोनों एक-दूसरे में रचकर-बसकर जीते हैं। चढ़ती जवानी की बाढ़ पर किनारे अंकुश नहीं लगा सकते। भोजपुरी गीतों की तारों को छेड़ेंगे तो यह कथित सच्चाई पूर्ण सौन्दर्य के साथ सामने हाज़िर होगी। नारी तो भारतीय एवं पश्चिमी संपूर्ण लोकसंस्कृति के आर-पार फैली हुई है। फिर नारी सौंदर्य के निर्धारित पैमाने भी तो प्रकृति की उपज ही हैं। वह अपने चारों ओर के फूलों, पत्तियों, वृक्षों, पशु-पक्षियों, सरिताओं, मेघों, पर्वतों आदि में कालिदास की शकुंतला की तरह मानवीय सौंदर्य के तत्व ढूँढ़ती है। कहना न होगा कि लोकगीतों में ये सभी रंग अपनी विभिन्न चंचलताओं के साथ साकार हुए हैं। यह कहना भी गैर-वाज़िब न होगा कि गीत-नृत्यों को सहेजकर रखने में नारियाँ, पुरुषों को पराजित कर देती हैं। नारी जिंदा है तो गीत और लोरियाँ भी जीवित रहेंगी।

यह सत्य के तराजू में तुला हुआ तथ्य है कि गेयता तथा नृत्य दोनों मनुष्य के आदिम गुण रहे हैं,

आज भी हैं और रहती-बसती दुनिया तक रहेंगे। कदाचित् इसीलिए भारतीय एवं विदेशी लोकवाङ्मय में लोकगीत-लोकनृत्यों की एक दीर्घतम तथा विस्तृत परंपरा मिलती है। स्वीकार यह भी किया जाना चाहिए कि विश्व की सभी भाषाओं के साहित्य का प्राचीनतम स्वरूप उसका लोकसाहित्य ही है, जिसमें उस समाज विशेष की सभ्यता, संस्कृति, संस्कार, रीति-रिवाज़, जीवन शैली, इतिहास, मानव मनोविज्ञान, जीवनानुभव, संचित ज्ञान, लोकरंजन और अनेकों शाश्वत तत्व विद्यमान रहते हैं। इनमें भाषायी ध्वन्यात्मक फर्क होते हुए भी दुनिया के समस्त लोकगीतों के मूल भाव, मूल अपील में अद्‌भुत समानता है। स्कॉटलैंड की पहाड़ियों की गोद में फसल काटती-बाँधती और गीत गाती हुई अकेली लड़की के गीत का अर्थ यद्यपि विलियम वर्डस्वर्थ पूरी तरह नहीं समझ सका था, फिर भी पहाड़ियों के उस पार दूर तक जाते हुए कवि के कानों में उस गीत की मधुर गूँज अनुगुंजित होती रही जिसका बहुत ही सुंदर चित्रण वर्डस्वर्थ ने अपनी गीतात्मक कविता 'द सोलेटरी रीपर' में किया है। यह रेखांकित करना भी अर्थसंगत है कि असम के चाय के बागानों, कश्मीर के सेब बागों, पंजाब के फसल के खेतों, महाराष्ट्र के संतरे के बगीचों, तमिलनाडु के पर्व-उत्सवों और केरल के नारिकेल झुरमटों में काम करते हुए गाए जाने वाले लोकगीतों की भाषा भले ही अलग-अलग है, लेकिन उनमें व्यंजित भाव-संवेदना एक समान है, जिसे परिशुद्ध कर्ण तथा स्वच्छ हृदय आसानी से समझ लेते हैं। दिलचस्प बात है कि हकीकत की तरह लोकगीत धरती पर अपनी-अपनी जगह पर खड़े हैं। ताजा साँस की तरह ये गीत होंठों पर आते हैं। संदर्भवश, जर्मनी के बवेरिया प्रान्त में ग्रामीण वातावरण का एक खास रेस्तरां है, जहाँ गाय के गले में बँधी घंटियों का संगीत सुनाया जाता है। लोग लकड़ी की सुराहियों में बीयर पीते रहते हैं। लगातार तालियों और सीटियों से लोकगीतों की कुछ पंक्तियों के दोहराव से गीत गायक झूम-झूमकर साथ देते हैं। इसी अवसर के एक जर्मन लोकगीत की बानगी देखिए- 'बर्फ से भीगी हवा बह रही है।/ मेरे सिर का पल्लू उड़ गया है।/ कहीं चैन नहीं, पर लोग कहते हैं/ बहुत दूर कहीं एक पेड़ है, वहाँ चैन मिलता है।/ मैं सोचता हूँ, जो भी अपहुँच है, वही खूबसूरत है।'

स्पष्ट है कि लोकगीत एवं लोकनृत्य किसी एक धरती, किसी एक देश, किसी एक ज़बान या किसी एक कौम की जायदाद नहीं हैं। यह सरमाया है हर उस धरती का जहाँ धरती सागर की मानिंद विशाल होती है और जज्बातों से महकती है। ये संपत्ति हैं उस राष्ट्र की जहाँ अदब, संस्कृति और सभ्यता रात-दिन विकसित होते हैं, हर तरह की सरहदबंदी से मुक्त। ये अमूल्य कुबेर हैं उस ज़बान के जहाँ दिलों को सुनना भी आता है, देखना भी और पहचानना भी। ये लाड़ले हैं हर उस कौम के जिसके बाशिंदे निरे परिपूर्ण वर्तमान में जीते हैं और आज की तरह ही अपने आप जीते-जागते हैं। दूसरे के साथ बसते हैं। इन गीतों का संबंध हर उस रात और उस दिन से है, जहाँ हर रात एक नए गीत के ख़्याल को कोख में डालकर सोती है और जहाँ पर सवेरा एक नूतन गीत गुनगुनाते हुए दिन की सीढ़ियाँ चढ़ता है। आश्चर्य नहीं कि जिस जगह पर आकर गीत, कुरान, बाइबिल तथा ग्रंथ रुक जाते हैं, उसके आगे लोकगीत और लोकनृत्य चलते हैं, एक खास किस्म की सफाई के साथ।

Director, Higher Education and Research Centre, 3150, Sector 24-D, Chandigarh - 160023

आलेख

विज्ञान के क्षेत्र में हिंदी का उपयोग

- प्रो. रामचरण मेहरोत्रा

तृतीय विश्व हिंदी सम्मेलन के अवसर पर अपने देश में ही नहीं वरन् संसार के विभिन्न क्षेत्रों में हिंदी के बढ़ते हुए महत्व के परिप्रेक्ष्य से जब अपने यहाँ विज्ञान के क्षेत्र में हिंदी के उपयोग की ओर दृष्टिपात करते हैं, तो निराशा होती है।

ऐसी बात नहीं है कि इस ओर वैज्ञानिकों और हिंदी प्रेमियों का ध्यान ही न गया हो। आज से 70 वर्ष पहले सन् 1913 में प्रयाग में विज्ञान परिषद नामक संस्थान की स्थापना हुई थी जिसका मुख्य ध्येय ही था कि हिंदी के माध्यम से विज्ञान के बढ़ते हुए ज्ञान को जन-साधारण तक पहुँचाया जाए और इसी ध्येय से 'विज्ञान' नामक मासिक पत्रिका लगभग 70 वर्षों से बराबर प्रकाशित होती रही है। समस्त हिंदी जगत को रामदास गौड़, गोरख प्रसाद, मूलदेव सहाय वर्मा तथा सत्यप्रकाश जैसे महानुभावों का आभारी होना चाहिए कि इनके सतत निःस्वार्थ प्रयासों के फलस्वरूप विज्ञान के विविध विषयों पर इतनी बृहत सामग्री उपलब्ध हो सकी जो प्रायः आगामी लेखकों के लिए अत्यंत उपयोगी सिद्ध हुई है। यह तो उदाहरण है। कुछ हिंदी प्रेमियों के अथक प्रयासों की आंशिक सफलता के बिना किसी आर्थिक या इस शताब्दी के चौथे दशक में मिली 600 साल की हास्यास्पद सहायता के सहारे प्रतिकूल वातावरण में इतना बृहत् कार्य चला पाना कितना कठिन रहा होगा। इसका छोटा सा अनुभव मुझे भी सन् 1947 तक 'विज्ञान' मासिक के संपादन भार संभालते हुआ। टुटही साइकिल पर पेपर-कंट्रोलर के दसियों चक्कर, नित्य सुबह-शाम प्रेस से प्रूफ लाने और पहुँचाने ऐसे सब काम संपादक ही के उत्तरदायित्व थे, परंतु अंग्रेजों की निस्वार्थ सेवा का उदाहरण ही ऐसा प्रेरणादायक था कि पढ़ाने और अनुसंधान के साथ ही दो सौ रुपये मासिक वेतन वाला निर्धन अध्यापक महँगाई से जूझता हुआ इतनी कठिन जिम्मेदारी निभा पाया।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद देश में राष्ट्रीय स्वाभिमान की जो लहर आई थी, उसको यदि उच्च वर्गों के गिने-चुने अंग्रेजीदां पनपने देते और अपने क्षणिक स्वार्थ के कारण उसमें रोड़े न अटकाते तो 3-4 दशकों में सब क्षेत्रीय भाषाएँ अधिक उन्नत स्तर पर होतीं और हिंदी सब क्षेत्रों को एक सूत्र में बाँधने बाली संपर्क या राष्ट्रभाषा के रूप में निर्विवाद रूप से स्वीकृत होती। इतिहास, भूगोल, अर्थशास्त्र ऐसे समाजविज्ञान के विषयों का तो पठन-पाठन स्वतंत्रता के दो एक साल बाद ही कुछ विश्वविद्यालयों में आरंभ हो गया था, परंतु विज्ञान, इंजीनियरिंग तथा चिकित्साशास्त्र ऐसे विषयों के लिए मुख्य समस्या उपयुक्त शब्दावली की थी। शब्दावली-निर्माण का कार्य वैज्ञानिक शब्दावली बोर्ड के मार्गदर्शन में सन् 1952 में शिक्षा मंत्रालय में एक हिंदी अनुभाग के अधीन आरंभ हुआ और सन् 1960 में केंद्रीय हिंदी निदेशालय की स्थापना हुई, जिसके कठिन परिश्रम के फलस्वरूप सन् 1973 में विभिन्न विज्ञान विषयों के स्नातकोत्तर स्तर के लिए एक लाख तीन हजार शब्दों का बृहत् पारिभाषिक शब्द संग्रह प्रकाशित किया गया। गत कुछ वर्षों से आयोग विभिन्न विषयों में शब्दों के

पारिभाषिक कोश लिखवाने का प्रयत्न कर रहा है तथा विज्ञान के अतिरिक्त इंजीनियरिंग और चिकित्साशास्त्र ऐसे विषयों में भी शब्दकोश तथा पठन-पाठन की सामग्री उपलब्ध करवाने की ओर अग्रशील है।

अपने देश की विशिष्ट परिस्थितियों में शब्दकोशों का तो महत्व है ही परंतु साथ ही कठिन से कठिन विषयों पर पुस्तकें लिखने के प्रयास में स्वतः ही शब्द गढ़े जाते हैं और इस प्रकार के शब्द प्रायः अधिक उपयुक्त होते हैं। भविष्यद्रष्टा हिंदी के सबसे प्रमुख सेवी बाबू पुरुषोत्तमदास जी टंडन ने इस ओर विशेष बल दिया था। इस बारे में अपने एक स्वयं अनुभव का उदाहरण देने की धृष्टता करूँगा। प्रयाग में मध्य मई की भीषण गर्मी में लगभग एक बजे एक दिन बाबू जी पसीने में लथपथ माधव कुंज में स्थित मेरे मकान का दरवाजा खटखटा रहे थे। अंदर आते ही उनका एक ही अनुरोध था कि मैं 'भौतिक रसायन' पर स्नातक स्तर की एक पुस्तक हिंदी में उत्तर प्रदेश सम्मेलन के लिए 4-5 महीने में लिख दूँ। मैंने अन्य बहुत से कामों में फँसे होने की मजबूरी की बात छेड़ी, तो इतना गुस्सा हो गए कि रो से पड़े। ऐसे सरल हृदय महापुरुष को कौन 'न' कह सकता था। अगले तीन चार महीनों में दत्तचित्त हो सब काम छोड़कर भौतिक रसायन जैसे कठिन विषय पर पुस्तक लिखने में लग जाना पड़ा। समय स्वतंत्रता प्राप्ति के कुछ ही वर्षों बाद तक तो विद्यार्थियों में हिंदी के माध्यम से शिक्षा ग्रहण करने का बड़ा उत्साह था। उनमें से कुछ विद्यार्थियों को जब मैंने अपनी प्रस्तावित पुस्तक के कुछ अध्याय पढ़ने के लिए दिए तो उनकी सच्ची प्रतिक्रिया थी कि अपनी मातृभाषा में गूढ़ तथ्य समझने में बहुत ही सुविधा होती है। उस समय प्रयाग विश्वविद्यालय ऐसी संस्था थी जहाँ आई.सी.एस., आई. ए. एस. ऐसी सरकारी नौकरियों का ही बोल-बाला था, वहाँ भी कक्षा में पूछने पर कि कितने विद्यार्थी हिंदी में पढ़ना चाहते हैं तो लगभग 70-80 प्रतिशत विद्यार्थी हिंदी के माध्यम से पढ़ना चाहते थे। आज 25-30 वर्ष बाद यदि कक्षा में वही सवाल फिर दुहराता हूँ तो 25 प्रतिशत से अधिक विद्यार्थी हिंदी में पढ़ना नहीं चाहते। अपनी राष्ट्रीय भावनाओं में कितनी गिरावट आई, यह इसका ज्वलंत उदाहरण है।

उपर्युक्त शोचनीय स्थिति का क्या कारण है? आज-कल हिंदी क्षेत्रों के अधिकतर स्कूलों में तो सब विषयों की पढ़ाई हिंदी में होने लगी है। हो सकता है कि सभी विषयों में पर्याप्त संख्या में अच्छी पुस्तकें उपलब्ध न हों, तो भी पहले से और विशेष रूप में विभिन्न अकादमियों के पिछले दशक के प्रयत्नों के फलस्वरूप कठिन से कठिन विषयों पर अच्छी पुस्तकें लिखी जा चुकी हैं। इन सब परिस्थितियों की अनुकूलता के होते हुए भी हमारा विद्यार्थी अंग्रेजी के माध्यम को पसंद करता है जिसमें कुछ समझ पाना उसके लिए और भी कठिन हो रहा है, क्योंकि उसकी सब बुनियादी पढ़ाई हिंदी में ही हुई है। इसका मुख्य कारण हमारे देश की ढुलमुल नीति है और देश में बढ़ती हुई बेकारी में विदेशी नौकरियों का आकर्षण है।

इन कारणों से और देश के प्रति स्वाभिमान के अभाव में विद्यार्थी पढ़ना तो अंग्रेजी में चाहता है, परंतु उसकी तथा प्रायः अध्यापक की अंग्रेजी में कम होती हुई दक्षता के कारण विषय को समझना तो उसके लिए और भी कठिन होता जाता है ! इस लाचारी में उसके लिए एक ही रास्ता बच जाता है कि केवल इम्तहान में पास कराने की दृष्टि से लिखे गए सस्ते नोट्स से विषय के चुने हुए सवालों को वह घोंट ले और परीक्षा पुस्तिका पर अपने इस अनपचे ज्ञान को उलट जाए। हिंदी की तो दुर्गति हो ही रही है परंतु

उसके साथ ही ज्ञान-विज्ञान में पठन-पाठन के स्तर में जो गिरावट आ रही है, उसके कारणों में प्रमुख हमारी भाषा के प्रति ढुलमुल नीति है।

आज के वैज्ञानिक युग में विज्ञान के ज्ञान को जन साधारण तक पहुँचाने का कार्य कितना महत्वपूर्ण है इसको दुहराने की कोई आवश्यकता नहीं प्रतीत होती। प्रायः उच्च स्तर पर विज्ञान की शिक्षा अपनी मातृभाषा में हो, इसके विरोध में यह तर्क दिया जाता है कि उच्चतम ज्ञान का भंडार अंग्रेजी में सबसे ज्यादा तेजी से बढ़ रहा है और अपनी मातृभाषा में शिक्षित विद्यार्थी इस ज्ञान से पूरा लाभ न उठा सकेंगे। जब रूसी, चीनी, जापानी सब इस अंग्रेज़ी के ज्ञान से लाभ उठा सकते हैं तो अंग्रेजी की इतनी पुरानी थाती के वातावरण में पले विद्यार्थियों को क्यों कठिनाई आएगी? यह बात समझ में तो नहीं आ सकती, परंतु फिर भी यदि इस बात के महत्व को कुछ देर के लिए मान भी लिया जाए तो विज्ञान के सरल ज्ञान को जनसाधारण तक पहुँचाने का कार्य विदेशी भाषा के माध्यम से नहीं हो सकता, इसको तो अंग्रेज़ी के बड़े से बड़े समर्थकों को भी मानना पड़ेगा। इस ओर कभी-कभी दबी ज़बान से यह भनक सुनाई-सी पड़ती है कि हमारी जनता की रुचि ही इस ओर नहीं है। इस बात की मिथ्यता को सिद्ध करने के लिए भी मैं एक अपने ही अनुभव की शरण लेने की क्षमा याचना करूँगा।

विज्ञान और तकनीक के महत्व को समझते हुए स्वतंत्र काल के आरंभ ही कौंसिल ऑफ साइंटिफिक तथा इंडस्ट्रियल रिसर्च के अंतर्गत अनेकों अनुसंधानशालाओं को आरंभ किया गया और इस कौंसिल ने विशेष कर अपनी प्रयोगशालाओं की उपलब्धियों, विज्ञान को और विज्ञान के सरल ज्ञान को जनसाधारण तक पहुँचाने के लिए 'विज्ञान प्रगति' नामक मासिक का शुभारंभ सन् 1954 में किया, परंतु इसको ऐसा सौतेला बर्ताव मिल रहा था कि 1962 तक इसका वितरण लगभग दो-ढाई सौ तक ही रहा। 1963 में कौंसिल के शासक बोर्ड में जब मैंने यह प्रश्न उठाया तो पंडित नेहरू को इससे बड़ा क्षोभ हुआ और उन्होंने इस स्थिति को फौरन सुधारने के आदेश दिए। हम दो तीन व्यक्तियों के मामूली प्रयास से ही इसी 'विज्ञान प्रगति' का वितरण दो तीन वर्षों में प्रति मास ढाई सौ से बढ़कर एक लाख से स्पष्ट है कि हमारे जनसाधारण में नए ज्ञान की ओर विरक्ति नहीं है वरन् हमारे प्रयत्नों में ही कमी रह जाती है जिसके कारण नए ज्ञानों की लहर से वे वंचित रह जाते हैं।

हमारे देश में उच्चतम स्तर तक विज्ञान की शिक्षा का माध्यम बनाने में प्रायः यह भी संशय व्यक्त किया जाता है कि विभिन्न विषयों की शब्दावली और पाठ्य-पुस्तकों तथा अन्य साहित्य पर इतना कार्य हो जाने पर हिंदी भाषा में इतनी क्षमता नहीं है कि शोध के स्तर पर इसका उपयोग किया जा सके। विज्ञान परिषद्, प्रयाग द्वारा 'अनुसंधान पत्रिका' का प्रकाशन तो अनेकों वर्षों से हो ही रहा है, इधर 7-8 वर्षों से राजस्थान, ग्रंथ अकादमी से 'रसायन समीक्षा' नामक पत्रिका के प्रकाशन ने रसायन शास्त्र जैसे जटिल विषय का उदाहरण लेकर सिद्ध कर दिया है कि क्लिष्ट से क्लिष्ट विषय का आधुनिकतम ज्ञान हिंदी के माध्यम से प्रस्तुत करने में कोई कठिनाई नहीं रह गई है। सच तो यह है कि विज्ञान के विद्यार्थी और अध्यापक के रूप में मेरा तो यह अनुमान है कि हमारे देश में वैज्ञानिक कार्य का स्तर सर्वोच्च कोटि का नहीं

हो पाता। इसके कारणों में प्रमुख कारण विदेशी अपरिचित भाषा का शिक्षा-माध्यम होना है। आज से 40-50 वर्ष पहले परतंत्र काल तक जब मेरी श्रेणी के व्यक्ति विद्यार्थी थे तो स्कूली शिक्षा का प्रमुख अंग अंग्रेजी भाषा होती थी और इसके बाद इस विदेशी भाषा में इतना ज्ञान कम से कम संभव हो पाता था कि वैज्ञानिक पुस्तकों के मर्म को समझ सकें। तथापि हम भी सोचते तो अपनी मातृभाषा ही में थे, परंतु फिर भी कुछ काम तो चल जाता था। स्वाभाविक ही है कि आजकल अंग्रेजी की शिक्षा को उतना महत्व नहीं दिया जा सकता जिसके कारण टूटी-फूटी अंग्रेजी के ज्ञान के सहारे विज्ञान के गूढ़तम विषयों को समझ पाना नई पीढ़ी के लिए अत्यंत ही कठिन हो उठा है।

हिंदी की शिक्षा तथा ज्ञान का माध्यम बनाने के मेरे ऐसे समर्थक अंग्रेजी या आज की संकुचित होती अन्य विदेशी भाषाओं के अध्ययन के विरुद्ध नहीं हैं। आज की संकुचित होती हुई दुनिया में विदेशी भाषाओं के ज्ञान का महत्व तेजी से बढ़ता जा रहा है। प्रश्न केवल यह है कि इन विदेशी भाषाओं का ज्ञान किस स्तर पर ग्रहण किया जाए। आधुनिक ज्ञान की जिस पिछड़ी हुई परिस्थिति में हमारे देश को इस कमी को दूर करने के लिए नई नीति निर्धारण करने का अवसर मिला। कुछ वैसी ही परिस्थितियों में होकर लगभग 3-4 दशकों से चीन भी गुजर रहा है। नवंबर-दिसंबर, 1982 में भारतीय वैज्ञानिकों का एक दल चीन गया था और लौटने पर उन्होंने वहाँ वैज्ञानिक प्रगति का जो वृत्तांत बताया, उसमें एक बात यह भी विशेष थी कि हर विषय का बृहत् साहित्य ही अपनी भाषा में उपलब्ध नहीं कराया गया है वरन् वहाँ उच्चतम स्तर का सब कार्य भी अपनी भाषा में होता है, यहाँ तक कि उनके वैज्ञानिकों के अधिकांश अनुसंधान लेख चीनी भाषा में ही छपाए जाते हैं। रूस का वैज्ञानिक स्तर उनकी निर्णायक क्रांति के समय इतना नीचा नहीं था, परंतु विभिन्न 16 प्रादेशिक भाषाओं की समस्या उनके यहाँ भी हमारे देश की ही भाँति जटिल थी। सब सोलह भाषाओं में शब्दावली उपलब्ध कराने का बृहत् कार्य सोवियत संघ को भी करना पड़ा और वहाँ अब भी जारी है।

रूस में अंग्रेजी तथा अन्य भाषाओं में छपे अनुसंधान लेखों का बराबर अनुवाद किया जाता है और वैज्ञानिकों को विदेशी भाषा और अन्य भाषाओं में छपे लेखों को सीधा समझने को भी प्रोत्साहित किया जाता है, जिससे आज के अति तीव्र गति से बढ़ते हुए ज्ञान में ज्ञान की होड़ में वे किसी भी कारण जरा भी पिछड़ न जाएँ। यह सब होते हुए भी शिक्षा और आंतरिक अनुसंधान गोष्ठियों आदि का माध्यम तो अपनी ही भाषा है, तभी तो रूसी में छपे साहित्य को पश्चिमी देश जापान में इतना महत्व देते हैं कि अमरीका में रूसी भाषा में प्रकाशित विज्ञान के अनुसंधान लेखों को तुरंत ही अनुवाद करने की बृहत् योजना कार्य कर रही है। जापान में द्वितीय महायुद्ध के बाद ज्ञान की परिस्थिति काफी अच्छी होते हुए भी उन्होंने विज्ञान तथा तकनीक के क्षेत्र में अग्रणीय रहने का विशेष प्रयत्न किया। अधिकांश जापानी वैज्ञानिक थोड़ी बहुत अंग्रेजी जानते हैं, परंतु अंतर्राष्ट्रीय कांफ्रेंसों में उन्हें अपनी टूटी-फूटी अंग्रेजी के ज्ञान पर कोई लज्जा नहीं आती, साथ ही ज्ञान-भंडार की दक्षता के कारण उन्हें विशेष आदर से सुना जाता है और उनकी बात के मर्म को समझने का विशेष प्रयत्न किया जाता है। हमारे यहाँ तो कोई वैज्ञानिक हिंदी में अपनी बात कहने भी लगे तो उसकी ओर लोग अजीब निगाह से देखने लग जाते हैं। सन् 1979 में इंडियन साइंस कांग्रेस के अध्यक्ष

पद से अपना अभिभाषण अंग्रेज़ ही पढ़ते समय जब मैंने आरंभिक दो-चार वाक्य प्रतीकात्मक रूप से हिंदी में कहे तो कुछ ऐसी ही अनुभूति मुझे भी हुई थी।

अपने देश में विज्ञान के क्षेत्र में हिंदी के उपयोग के बारे में पिछले 3-4 दशकों में किए गए प्रयासों का उल्लेख करते समय मैंने कुछ व्यक्तिगत अनुभवों का भी जिक्र किया है। इसके औचित्य के लिए क्षमाप्रार्थी होते हुए भी मुझे आशा है कि इससे समस्या की विभिन्न प्रवृत्तियों और समस्याओं को अधिक विश्वसनीय रूप से स्पष्ट किया जा सका। यद्यपि बहुत लंबा और बहुमूल्य समय निकल चुका है, परंतु स्थिति सर्वथा निराशाजनक नहीं है। सम्मेलन के अवसर पर विज्ञान के विभिन्न विषयों और स्तरों पर प्रकाशित साहित्य की तालिका बनाई जा रही है। इसमें यह स्पष्ट होगा कि भौतिक तथा जैविक विज्ञानों के तो मुख्य विषयों और उनकी प्रमुख शाखाओं के लिए स्नातकोत्तर स्तर का साहित्य लिखा जा चुका है। कुछ विशिष्ट स्थलों पर जैसे पंतनगर कृषि विश्वविद्यालय में तो हिंदी में साहित्य कक्षा में उपयोग के दृष्टिकोण से ही लिखा गया है; अन्यत्र इस नए साहित्य की उपयुक्तता के बारे में प्रश्न उठ सकते हैं, परंतु उनका समाधान कठिन नहीं है। चिकित्साशास्त्र और इंजीनियरिंग के क्षेत्रों में तो केवल साहित्य ही का अभाव नहीं है वरन् शिक्षकों और नीतिनिर्धारकों की मनोवृत्ति ही विपरीत दिशा में कार्य कर रही है। इसमें कुछ आंशिक योगदान इन संकायों के विद्यार्थियों का विदेशी नौकरी के प्रति प्रलोभन का भी है, जिसमें अंग्रेजी भाषा का ज्ञान विशेष रूप से सहायक होता है। इन विषयों के कार्य की कठिनता को देखते हुए इनमें हिंदी साहित्य की रचना का कार्य केंद्रीय संस्थान ने ले रखा है। इस ओर विशेष उत्साह से प्रगति होने की नितांत आवश्यकता है। स्कूलों में हिंदी माध्यम से पढ़कर आनेवाले विद्यार्थियों को यदि यह विश्वास हो जाए कि उनको सरलता से समझ में आनेवाली मातृभाषा में विषय का पठन-पाठन हो सकता है, तो उनके अग्रह को अधिक दिनों तक टाला नहीं जा सकेगा। विदेशों में नौकरी के लिए इच्छुक एक छोटे अंश के विद्यार्थी समाज को छोड़कर चिकित्सा तथा इंजीनियरिंग संकायों के अधिकांश विद्यार्थी अन्य संकायों के विद्यार्थियों की अपेक्षा अपने भविष्य से अधिक आशान्वित हैं और इस ज्ञानार्जन में उनकी रुचि भी अधिक है और यही रुचि पठन-पाठन को हिंदी में करने में सहायक होगी।

दूसरा प्रश्न विभिन्न क्षेत्रीय भाषाओं में गढ़ी गई पृथक-पृथक पारिभाषिक शब्दावली का है। प्रसन्नता की बात है कि केंद्रीय संस्थान के प्रयासों के फलस्वरूप यह प्रदर्शित किया गया है कि इनमें इतनी भिन्नता नहीं है जितनी कि अनुमान की जाती थी और थोड़े से प्रयत्न से इसे और भी कम किया जा सकता है, जो इच्छित दिशा में प्रगति करने में विशेष रूप से सहायक होगी। सबसे प्रमुख बात तो मनोवृत्ति की है कि हम सब में अपनी मातृभाषा का गर्व हो और केवल विदेशी भाषा में दक्षता ही को हम अपनी प्रगति का मापदंड न बनाएँ। आशा है, विश्व हिंदी सम्मेलन के ऐसे आयोजनों से हम में इच्छित गर्व का सृजन होगा और हम अपने देश में अपनी भाषा को वह आदरपूर्ण स्थान दे सकेंगे जिसकी कुछ अधिक विस्तृत कल्पना इस प्रकार के सम्मेलनों का धरातल होती है।

(साभार : जनवरी 1984 'हिंदी प्रचार समाचार')

कविता

भ्रष्टाचार की दुर्गति होगी कब?

- बी. के. बालकृष्णन नायर

अरे, भ्रष्टाचार!
स्वच्छन्द नभ में
पल-पल में निहाल करते तुझे जन-जन
तेरी जय हो हे भ्रष्टाचार!

सूरज उठते तेरा कलरव,
सूरज चढ़ते तेरा ताण्डव
सूरज ढलते तेरी जयकार
जय हो! जय हो हे भ्रष्टाचार।

तू दूध समान है, व्यक्ति-जीवन में
तू भूत समान है, सब जीवन में।
तेरी माया बनती-रहती बारंबार,
जय हो, जय हो हे भ्रष्टाचार!

तू है नेता बंगला का
तू है नेता अमला का
तू चलाता है सरकार,
तेरी जय हो हे भ्रष्टाचार!

तेरे बल में चमचे भरे हैं
तुझ में है ताकत सिमेंट खाने की
तुझ में ताकत है कोयला पचाने की
जय हो! जय हो हे भ्रष्टाचार!

तू तलवार नहीं तोप भी है
तू रोब नहीं तो रुतब भी है
तेरा सत्कार तो है कार्यालय में
तेरी जय हा हे भ्रष्टाचार!

हर दल में तू ही तू है,
हर जेल में तू ही तू है।
अगर तू नहीं सबके सब लाचार,
तेरी जय हो हे भ्रष्टाचार!

तू साहित्य का भी अलंकार है
सब कला रंगों में तू ही तू है।
तू अहंकार भर दे चाहे जिसमें,
तेरी जय हो हे भ्रष्टाचार!

तुझ में दम है उन्नति दिलवाने का
पर, तेरा अंतर अवनति करवाने का
छोड़ चल तू अहंकार दंभ को
जय हो! जय हो हे भ्रष्टाचार!

गीता ज्ञान भी फीका तेरे सामने,
कबीर वाणी फीकी तेरे सामने।
जन-जन सोचें तेरी हरकत,
जय हो जय हो हे भ्रष्टाचार!

तू क्या से क्या हो जाता हर-दम?
प्रजातंत्र का बादशाह बन जाता?
ममता मानवता निर्लिप्त बनें क्या?
तेरी जय हो हे भ्रष्टाचार!

तुझे लगता है युगों रह जाएगा,
तुझे लगता है सत्य मिट जाएगा।
तू समझा है सबके सब हैं गँवार,

एक दिन होगी तेरी दुर्गति
एक दिन होगा विस्फोट भयंकर
बड़वानल हो भ्रष्टाचार पर
जय हो, जय हो सत्य धर्म की!!

Jyothis, P.o. Kuthiravattam - 673016 (Kerala)

लघुकथा

रुद्राक्ष

- बी. जयलक्ष्मी

एक राजा थे। उनके राज्य में एक चोर बहुत दिनों से चोरी करता रहा। राज्य की प्रजा सब मिलकर राजा के पास गयी और उनसे चोर की शिकायत की। राजा ने चोर को पकड़ने का वादा किया। उन्होंने अपने मंत्रियों से चर्चा की और अंत में घोषित किया कि जो भी चोर को पकड़कर राजा के पास लाएगा उसको पाँच लाख रुपये इनाम में मिलेंगे। चोर लगातार चोरी करता रहा, किसी की पकड़ में नहीं आया तो राजा ने मुख्यमंत्री से गुस्से में कहा कि येन केन प्रकारेण उसको पकड़कर लाएँ। मंत्री जी चोर की तलाश में निकले। बहुत प्रयास के बाद उन्होंने चोर का पता लगा लिया। चोर को पकड़कर राजा से पाँच लाख इनाम हासिल करने के लिए सोचा, लेकिन उन्होंने तुरंत अपना इरादा बदल दिया।

चोर से कहा- अभी मैं तुमको राजा के सम्मुख ले जाऊँगा, तुमको आजीवन कारावास का दण्ड दिलाऊँगा और पाँच लाख का इनाम भी पाऊँगा, लेकिन मैं दूसरा उपाय सोच रहा हूँ। तुम मेरी मदद करोगे तो हम दोनों ही सुखी रह सकते हैं। चोर ने हाँ कहा तो मंत्री बोल उठे- मैं तुम्हें एक तपस्वी की वेश भूषा लाकर दूँगा। तुम एक पेड़ के नीचे तपस्वी के रूप में बैठे रहो। मैं राजा को तुम्हारे पास ले आऊँगा। राजा तुमसे चोर का पता पूछेंगे तो तुम अपने तपोबल से पता लगाने का वादा करो। बदले में राजा तुम्हें जो कुछ देने आएँगे तुम उन्हें ठुकरा देना। अंत में राजा अपने राज्य का आधा हिस्सा देने के लिए सहमत होंगे तब तुम हाँ कहना। राजा के राज्य का आधा हिस्सा तुम मुझे सौंप देना और बदले में मैं तुम्हें पच्चीस लाख रुपये दूँगा। तुम उन्हें लेकर दूसरा देश चला जाना और इस प्रकार हम दोनों को फायदा होगा। तुम कहना कि चोर अब आपके भय से दूसरे देश जा चुका है।

मंत्री के उपाय से चोर सहमत हुआ। अब वह गेरुआ वस्त्र पहनकर नकली दाढ़ी, मूँछ, जटा लगाकर गले में रुद्राक्ष डालकर, माथे में भस्म का लेप लगाकर, हाथ में एक दण्ड और कमंडल लेकर पेड़ के नीचे बैठ गया और 'ऊँ नमः शिवाय' जप करने लगा। मंत्री राजा को लेकर उसके पास पहुँचे। राजा ने तपस्वी से बिनती की कि अपने तपोबल से पता लगाकर बताएँ कि चोर कहाँ छिपा है। इसके बदले में वह तपस्वी को सोना, चाँदी, हीरे, मोती जो भी माँगेगा दे देगा। लेकिन तपस्वी ने कहा- 'मैं तो विरागी हूँ। मुझे इन चीज़ों से क्या लेना-देना। मैं तो इन लौकिक चीज़ों को त्यागकर तपस्वी बन गया हूँ। मुझे किसी चीज़ का मोह नहीं।'

अब राजा बोले- 'मैं अपनी बेटी का व्याह तुम्हारे साथ कर दूँगा। तुम्हें राज्य का आधा हिस्सा दहेज़ के रूप में दे दूँगा। तुम इनकार मत करना।' तपस्वी ने इसके लिए भी न कह दिया। मंत्री को बहुत ही आश्चर्य हुआ। राजा दुःखी होकर निराश लौटे। मंत्री ने चोर से पूछा- 'तुमने ऐसा क्यों किया?' चोर ने कहा- 'जब आपने मेरे गले में रुद्राक्ष डाला और माथे में भस्म लगाया तो मैं शिव भक्त बन गया। अब मुझे ईश्वर साक्षत्कार के अलावा कुछ नहीं चाहिए।' यह सुनकर मंत्री दंग रह गया। अपने-आप को धिक्कारने लगा।

C/926, HIG, Eri Scheme, 7th Street, Mogappair West, Chennai - 600037

तिल का ताड़ न कर

- नीलकंठ गोविन्दन

तिल का ताड़ न कर
तिल का ताड़ न कर
तिल-तिल करके ही
मिट जाने दे
नहीं तो, वह मन में,
गाँठ बन जाएगा।
गाँठ बन गया तो,
वह बड़ा सा काँटेदार
विष वृक्ष बन जाएगा।
वह नाश का कारण होगा।
सब को दर्द और पीड़ा
भोगना ही पड़ेगा।
केवल अपनी भलाई न चाहो
अपनी भलाई के पीछे,
हे मानव!
जीवन का मूल्य, नष्ट न कर।
जीवन को अपनी इच्छा से,
खिलौना बनाके मत खेल।
बंधु, तेरा विनोद, कोई न जानेगा।
जानेगा तो भी, कोई कुछ न बोलेगा।
तेरे पीछे तो, ताकतवाले
तेरे भागीदार हैं।
वे तो तुझे बचाते ही रहेंगे।
बंधु, तेरा काम,
तुझे अच्छा लगेगा।
पर औरों का मन,
दिन-ब-दिन
तड़पता ही रहेगा।
तेरा कर्मफल
भोगने को
औरों को मौका न दे।
तू तो अपना कर्म,
कभी न छोड़ेगा।
धन के पीछे,
तू अपना पागलपन
दिखाता ही रहेगा।
अपने दल के साथ
मज़ा उठाता ही रहेगा।
बंधु, तू नहीं जानेगा
तेरा यह धन मोह,
तुझे जड़ से उखाड़ फेंक देगा
समाज तुझे न मानेगा
तेरा गर्व चूर-चूर हो जाएगा
वक्त के हाथों में
तू जीत नहीं पाएगा।
राम नहीं छोड़ेगा, तुझे
कर्मफल भोगना ही पड़ेगा।
आत्मा का परमात्मा से
घनिष्ठ बंधुत्व है
वह है राम, अथवा ईश्वर
राम तो, सब के रक्षक हैं
तू कैसे बेचेगा!
बंधु, याद रखना
तेरा मन ही तेरी साक्षी है।

आलेख

पूर्वोत्तर भाषा साहित्य एवं संस्कृति

- डॉ. पी.ए. राधाकृष्णन

पूर्वोत्तर भारत से आशय भारत के सर्वाधिक पूर्वी क्षेत्रों से है जिसमें एक साथ जुड़े 'सात बहनों' के नाम से प्रसिद्ध राज्य असम, अरुणाचल, मेघालय, मणिपुर, मिजोरम, त्रिपुरा और नागालैण्ड शामिल हैं। पूर्वोत्तर भारत सांस्कृतिक दृष्टि से भारत के अन्य राज्यों से भिन्न है। भाषा की दृष्टि से इस क्षेत्र में तिब्बती-बर्मी भाषाओं के अधिक प्रचलन के कारण अलग पहचान है। इस क्षेत्र में दृढ़ जातीय संस्कृति व्याप्त है।

इन राज्यों के आर्थिक और सामाजिक विकास के लिए 1971 में पूर्वोत्तर परिषद (North Eastern Council) का गठन एक केंद्रीय संस्था के रूप में किया गया था। सिक्किम राज्य सात बहनों के अंदर न आने पर भी पूर्वोत्तर भारत के अंतर्गत था। 1975 में सिक्किम एक पूर्ण राज्य बन गया। पूर्वोत्तर भारत के कुछ राज्यों की सीमाएँ अंतर्राष्ट्रीय सीमाओं से लगती हैं।

इतिहास : भारतीय स्वतंत्रता के बाद ब्रिटिश भारत के उत्तरपूर्वीय क्षेत्र को असम के एकलराज्य के अंतर्गत वर्गीकृत कर दिया गया था। बाद में स्वतंत्र त्रिपुरा कमेटी जैसे कई स्वतंत्रता आंदोलन समस्त उत्तर पूर्वीय राज्यों को असम के अन्तर्गत समूहीकृत करने के विरोध में चलाए गए। 1960-70 के दशक में नागालैण्ड, मेघालय और मिजोरम राज्यों का गठन किया गया। इन सभी राज्यों के साथ इनकी अनूठी संस्कृति और इतिहास जुड़ा हुआ है। आजादी के बाद भारतीय राज्यों और राजनैतिक प्रणालियों का विस्तार एक चुनौती रहा है। यह क्षेत्र अपनी अनूठी संस्कृति, हस्तशिल्प, मार्शल आर्ट और प्राकृतिक सुंदरता के लिए जाना जाता है। इस क्षेत्र की समस्याओं में विद्रोह, बेरोजगारी, मादक पदार्थ का सेवन और आधारभूत सुविधाओं का अभाव प्रमुख हैं। 1990 के दशक में आर्थिक उदारीकरण की शुरूआत से ही अध्ययनों के माध्यम से यह प्रकट हुआ कि विकास के मामले में यह क्षेत्र अन्य क्षेत्रों की तुलना में पिछड़ा हुआ है।

समुदाय : पूर्वोतर भारत के सात बहनों के अन्दर निम्नलिखित समुदाय के लोगों को हम देख सकते हैं। असमिया, मिसिंग, बोडो, दिमासा, गारो, नेपाली, कार्बी, खासी, कुकी, मणिपुरी, मिजो, नागा, राबा, राजबेंगाशी, तिवा, त्रिपुरी, बंगाली, विष्णुप्रिया, मणिपुरी आदि।

साहित्य परंपरा : पूर्वोत्तर के सात राज्यों में अनेक बोली-भाषाएँ हैं। इन सभी में समृद्ध साहित्य है, किंतु आज भी इन अनेक भाषाओं की लिपि नहीं है। ये भाषाएँ अविकसित हैं। वहाँ की संस्कृति में आधुनिकता की गंध नहीं है। आसम की भाषा असमिया है। लगभग तीन करोड़ लोगों द्वारा बोली जानेवाली असमिया भाषा का अपना जलवा है, अपना महत्व है। असमिया भाषा का गौरवशाली इतिहास है। असमिया लिपि भारत के प्राचीन ब्राह्मी लिपि का आधुनिक स्वरूप है। बौद्धों के 'चर्यापद' में असमिया भाषा का व्यवस्थित रूप है। असम, अंग्रेज़ों के कब्जे में आने तक अजेय था। इसलिए उस काल खंड में असमिया भाषा की अच्छी उन्नति हुई थी। यह अहोम राजाओं के दरबार की भाषा थी। इसे 'बुरुंजी' भी कहा जाता था। 1819 में अमेरीकी

बाप्टिस्ट चर्च के पादारियों द्वारा बाइबल को असमिया भाषा में प्रकाशित किया गया। इन मिशनरियों द्वारा 1846 में 'अरुणोदय' नामक मासिक प्रकाशित किया गया। 19वीं शताब्दी में चंद्रकुमार अग्रवाल, लक्ष्मीनाथ बेजबरूआ, हेमचन्द्र गोस्वामी जैसे साहित्यकारों ने असमिया भाषा की आवाज़ बुलंद की। असमिया भाषा में छायावादी आंदोलन छेड़नेवाली मासिक पत्रिका 'जौनाकी' इस दरमियन प्रारंभ हुई।

असमिया भाषा के इस प्रवास में 1917 में कोलकत्ता में असमिया भाषा के कुछ विद्यार्थी इकट्ठे हुए और उन्होनें 'असम साहित्य सभा' का गठन किया। इस संस्था ने असमिया भाषा का नेतृत्व किया। असम के सांस्कृतिक केंद्र जोरहाट में इसका मुख्यालय है। असम की साक्षरता देशा के औसत से भी आधिक अर्थात कम से कम 78% से ज्यादा है। असमिया बोलने वालों में साहित्य रुचि अधिक है। वहाँ समाज में साहित्यकारों को आदर और सम्मान दिया जाता है। आज तक 41 असमिया साहित्यकारों को साहित्य अकादमी पुरस्कार मिल चुका है।

स्वतंत्र भारत में असमिया भाषा का विकास तेज गति से हुआ है। अंबिका गिरी, रघुनाथ चौधरी, हितेश्वर बरूआ, देवकांत बरूआ, डिंबेश्वर नियोग आदि कवियों ने असम की मिट्टी की खुशबु अपने काव्य के माध्यम से फैलाएँ। नव काव्य परंपरा में वीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य का नाम अत्यंत आदर के साथ लिया जाता है। सन् 1979 में भट्टाचार्य द्वारा लिखा गया 'मृत्युंजय' उपन्यास को 'भारतीय ज्ञानपीठ पुरस्कार' मिला। असमिया भाषा का यह पहला ज्ञानपीठ पुरस्कार था। दूसरा पुरस्कार सन् 2000 में इंदिरा गोस्वामी को मिला। इंदिरा गोस्वामी की साहित्यिक प्रतिभा उल्लेखनीय है। उलफा और केंद्र सरकार के बीच समन्वय का काम इंदिरा जी ने किया था। वह साहित्य मंच पर मामुनिरायसेन गोस्वामी नाम से जानी जाती थी।

उपन्यास और कहानी के क्षेत्र में असमिया साहित्य का विशेष योगदान है। शरतचंद्र गोस्वामी की कहानियाँ असम में अत्यंत लोकप्रिय हैं। ऐतिहासिक नाटकों की असम में लंबी चौड़ी परंपरा है। भारतीय संविधान की आठवीं अनुसूची में शामिल एक और भाषा असम में बोली जाती है। वह है 'बोडो' । इस भाषा को 14 लाख से ज्यादा लोग बोलते हैं, लेकिन इसमें साहित्यिक निर्माण की गति धीमी है। पूर्वोतर में हिंदी का औपचारिक रूप से प्रवेश सन् 1934 में हुआ। महात्मा गांधी जी अखिल भारतीय हरिजन सभा की स्थापना हेतु असम आए। सन् 1938 में 'असम हिंदी प्रचार समिति' की स्थापना गुवाहाटी में हुई। यह समिति आगे चलकर 'असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति' बनी। आम लोगों में हिंदी भाषा तथा साहित्य के प्रचार-प्रसार करने हेतु प्रबोध, विशारद, प्रवीण आदि परीक्षाओं का आयोजन इस समिति के द्वारा होता आ रहा है।

केंद्रीय हिंदी संस्थान, गुवाहाटी द्वारा हिंदी शिक्षकों और हिंदी प्रचारकों के लिए प्रशिक्षण दिया जाता है। इस हिंदी संस्थान का कामकाज महत्वपूर्ण है। मणिपुर में सन् 1928 में हिंदी साहित्य सम्मेलन के द्वारा हिंदी का प्रचार-प्रसार प्रारंभ हुआ। सन् 1953 में मणिपुर हिंदी परिषद की स्थापना हुई। मुख्य प्रचारक हैं- ललित माधव शर्मा, तोम्बासिंह, नीलमणि सिंह, हिमाचार्य शर्मा, द्विजमणि देव शर्मा आदि।

केंद्रीय हिंदी संस्थान, नागालैण्ड द्वारा सन् 1972 में शिक्षक प्रशिक्षण शिबिर का आयोजन हुआ।

मुख्य प्रचारक हैं जामीर। वे विद्याभारती के अध्यक्ष थे। मिजोरम में हिंदी प्रोफसर डॉ. इंजीनियरी जैनी है। मेघालय में दो भाषाएँ हैं- खासी तथा गोरो। सन् 1976 में हिंदी संस्थान के शिलांग केंद्र की स्थापना हुई।

त्रिपुरा विश्वविद्यालय में हिंदी विभाग है। मुख्य प्रचारक रामचंद्र कुमार पाल, डॉ. मिलन राणी जामातिया है। त्रिपुरा विश्वविद्यालय विगत कुछ वर्ष से हिंदी प्रचार-प्रसार का काम कर रही है। अरुणाचल प्रदेश की संपर्क भाषा हिंदी है। सन् 1956 से केंद्र सरकार हिंदी को विद्यालयों में पढ़ाना अनिवार्य कर दिया था। मुख्य प्रचारक हैं तारो सिंदिक, जोराम अन्या आदि। सिक्किम में हिंदी को लेकर किसी भी प्रकार की विरोधी भावना नहीं है। मुख्य प्रचारक भी हैं सुवास दीपक।

असम में अन्य प्रातों से आए हुए लोग वास करते हैं। इनमें से प्रायः सभी लोगों की मातृभाषा हिंदी है। अपनी जीविका कमाने के साथ-साथ वे हिंदी एंव हिन्दुत्व का संरक्षण में अत्यंत सराहनीय प्रयास कर रहे हैं। इसलिए अनेक बार राष्ट्र विरोधी आतंकवादियों ने इन पर आक्रमण किए। मुख्य प्रचारक हैं डॉ. देवेन्द्र दास।

चुनैतियाँ : पूर्णतः अहिंदी भाषा क्षेत्र होने के कारण ग्रहण क्षमता को लेकर समस्या आती है। शुद्ध हिंदी बोलने के दबाव की वजह से गैर हिंदी भाषी मंच पर हिंदी बोलने में कतराते हैं। यहाँ जिन भाषाओं का प्रचार हैं उनमें से हिंदी का दूर-दूर तक संबंध नहीं है।

संभावनाएँ : हिंदी राष्ट्रीय एकता की एक सशक्त कड़ी के रूप में विकसित हो रही है। संपर्क और परिपूरक भाषा के रूप में हिंदी अपना स्थान बना रही है। पूर्वोतर की अनेक बोलियों में लिपि का अभाव है। इसलिए हिंदी लिपि को वे आसानी से ग्रहण कर सकते हैं। विविध लिपि रहित भाषाओं में छिपे हुए मौखिक साहित्य, रीति-नीति, आचार-विचार आदि को इस क्षेत्र से राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय स्तर तक पहुँचाने में हिंदी एक सबल माध्यम बनेगी। हिंदी का प्रचार-प्रसार तथा उसकी लोकप्रियता एवं व्यावहारिकता टीवी, सिनेमा, आकाशवाणी, पत्रकारिता, विद्यालय, महाविद्यालय तथा उच्च शिक्षा में हिंदी भाषा के प्रयोग द्वारा बढ़ रही है। विविध साहित्यिक, सांस्कृतिक एवं सामाजिक संस्थाओं की स्थापना के माध्यम से वे अपनी जाति को आगे बढ़ाने हेतु प्रयत्नशील है। इसी चेतना के चलते वे अपनी भाषा, साहित्य और सांस्कृतिक कार्यक्रमों से लोगों को देश की मूल धारा से जोड़ने के लिए तत्पर है। इस प्रयास में हिंदी सहायक हो सकती है।

Ebis Nest, Raintree Apartments, Illathaya, Po. Templegate, Thalashery - 670102 (Kerala)

'YouTube' Channel
प्रचारक बंधुओं के लिए शुभ समाचार

DBHPS, Central Sabha Chennai के नाम से सभा ने अपना **'YouTube'** चैनल शुरू किया है। इसमें सभा संबंधी समाचार, परीक्षा समाचार, समारोह, पाठ्य पुस्तक संबंधी संक्षिप्त विवरण होंगे। आप सबसे विनम्र अनुरोध है कि इस चैनल को 'Like' और 'Subscribe' करें।

‘रश्मिरथी’ काव्य में कृष्ण की चारित्रिक विशेषताएँ

- आर. सुंदरराजन

कवि परिचय : रामधारी सिंह ‘दिनकर’ का जन्म सन् 1908 में बिहार के सिमरिया में हुआ था। आप बहुमुखी प्रतिभा संपन्न कवि हैं। आपकी रचनाओं में भारतीय जनता की सांस्कृतिक, सामाजिक और राष्ट्रीय-जीवन की विस्तृत जानकारी प्राप्त होती है। रेणुका, ऊर्वशी, कुरुक्षेत्र, रश्मिरथी आदि आपकी अनुपम कृतियाँ हैं।

आमुख : ‘रश्मिरथी’ रामधारी सिंह ‘दिनकर’ कृत महाकाव्य है। श्री कृष्ण प्रस्तुत काव्य के प्रधान पात्रों में एक हैं। उनकी चारित्रिक विशेषताओं पर ध्यान देंगे।

शांति दूत : पांडवों के अज्ञातवास की पूर्ति पर दुर्योधन के पास श्री कृष्ण शांति-दूत के रूप में जाते हैं। वे दुर्योधन को इस प्रकार समझाते हैं-

‘दो न्याय अगर तो आधा दो
पर, इसमें भी यदि बाधा हो,
तो दे दो केवल पाँच ग्राम,
रक्खो अपनी धरती तमाम।
हम बड़ी खुशी से खाएँगे
परिजन पर असि न आएँगे।’

ईश्वरीय रूप : दुर्योधन श्री कृष्ण का उपदेश नहीं मानता। उल्टा उन्हें बाँधने की आज्ञा देता है। इस पर मजबूरन कृष्ण को अपना विराट रूप दिखाना पड़ता है-

दृग हों तो दृश्य अकाण्ड देख, मुझ में सारा ब्रह्माण्ड देख।
चर-अचर जीव, जग, क्षर- अक्षर नश्वर मनुष्य, सुरजाति अमर।
शत कोटि सूर्य, शत कोटि चंद्र, शत कोटि सरित, सर, सिंधु, मंद्र।

उपदेशक : श्री कृष्ण दुर्योधन को शांति का उपदेश देते हुए युद्ध के दुष्परिणाम की चेतावनी देते हैं। जैसे-

‘भाई पर भाई टूटेंगे, विष-बाण बूँद-से छूटेंगे
वायस-शृगाल सुख लूटेंगे, सौभाग्य मनु के फूटेंगे।
आखिर तू भूशायी होगा। हिंसा का पर, दायी होगा।

शांति का उपाय : श्री कृष्ण को यह विदित ही है कि दुर्योधन को कर्ण की वीरता पर पूरा विश्वास है। कर्ण ही काफ़ी है दुर्योधन के लिए महाभारत युद्ध में विजय प्राप्त करने के लिए। इसलिए वे कर्ण से मिलकर उसके जन्म का रहस्य बता देते हैं कि कर्ण पांडवों का बड़ा भाई है। कुंती का पहला पुत्र है। कर्ण अगर पांडवों के पक्ष में होगा, तो दुर्योधन कमज़ोर हो जाएगा। अतः महाभारत युद्ध संभव नहीं होगा तथा शांति की स्थापना हो जाएगी। अतः वे कहते हैं-

कुरुराज समर्पण करता हूँ, साम्राज्य समर्पण करता हूँ,
यश, मुकुट मान सिंहासन ले, बस एक भीख मुझको दे दे,
कौरव को तज रण रोक सखे,
भू का हर भावी शोक सखे।

गुणी का सम्मान : श्री कृष्ण का उपदेश विफल होता है। कर्ण समर्पित भाव से अपना सर्वस्व त्याग करने के लिए तैयार रहता है। मित्र के ऋण से उऋण होना नहीं चाहता। उसके इस आदर्श-मित्र-प्रेम की सराहना श्री कृष्ण यों करते हैं-

वीर शत बार धन्य, तुझ-सा न मित्र कोई अनन्य,
तू कुरुपति का ही नहीं प्राण, नरता का है भूषण महान

सफल राजनीतिज्ञ : राजनीति का आधार है छल-कपट। महाभारत में राजनैतिक छल-कपट का सहारा लिया गया है क्योंकि सफल राजनीतिज्ञ का एक मात्र लक्षण है। श्री कृष्ण भी इसका अपवाद नहीं हैं।

सारथी : श्री कृष्ण अर्जुन के सारथी बनते हैं। अपने पक्ष की विजय के लिए वे मानवीय छल-कपट का सहारा लेते हैं।

छल-कपट : कर्ण के रथ को कीचड़ में फँसाना, निहत्थे कर्ण पर बाण चलाने का आदेश अर्जुन को देना- ये सब श्री कृष्ण के छल-कपट के ज्वलन्त उदाहरण हैं। जब कर्ण उनसे न्याय की बात करता है, तो वे कहते हैं-

'मरा, अन्याय से अभिमन्यु जिस दिन,
कहाँ पर सो रहा था धर्म उस दिन'

निष्कर्ष : इस प्रकार 'रश्मिरथी' में श्री कृष्ण का चरित्र-चित्रण सुंदर ढंग से हुआ है। कर्ण-वध पर वे अपने निर्णय की सफाई अर्जुन को इस प्रकार देते हैं-

'कहूँ जो, पाल उसको, धर्म है यह
हनन कर शत्रु का, सतकर्म है यह।'

उदासी के बीच जीने की राह, मुमकिन है इनसे पार पाना...

- सन्दीप तोमर

'तुम उदास क्यों हो?' कुलबीर बड़ेसरों के सद्यः प्रकाशित कहानी संग्रह का नाम है जो 2021 में पंजाबी में छपा, लेकिन इसका हिन्दी अनुवाद सुभाष नीरव ने किया जो 2023 में भावना प्रकाशन से छपकर आया। स्पष्ट है कि अनुवाद स्वयं में एक स्वतंत्र विधा भी है। लेखिका के साथ अनुवादक भी किसी कृति के लिए बराबर का उत्तरदायी होता है। कुलबीर अपने समय और व्यवसाय की शिनाख्त करते हुए इस संकलन की कहानियों को बुनती हैं। अपने कथानक के लिहाज से ये कहानियाँ कुछ 'हटके' हैं।

कुलबीर की कहानियाँ न तो कलावादी शिल्पकारी से निर्मित होती हैं और न ही कथ्य की सपाट प्रस्तुति से। सधी हुई संप्रेषणीय भाषा और बेहद कसे हुए महीन शिल्प के सहारे वह विषय के इर्द-गिर्द एक ऐसा ताना-बाना रचती हैं कि पाठक कहानी के अंतिम शब्दों तक खुद को कहानी से बँधा पाता है। वे परिस्थितियाँ जिन्होंने कुलबीर से ये कहानियाँ लिखवाई हैं, कहीं अधिक सशक्त रही हैं। लेखिका की पैनी और महीन नज़र उन परिस्थितियों को कालजयी बना देती हैं। ये कहानियाँ पाठक के मन-मस्तिष्क को उद्वेलित करने में सक्षम दीख पड़ती हैं। इन कहानियों की कसक पाठक के भीतर तक अपनी पैठ बनाने की क्षमता रखती हैं। मन की उलझनें, प्रेम का भटकाव, मानव स्वभाव की दुर्बलताएँ, जीवन का एकाकीपन, रिश्तों का बनावटीपन, अभिनय, फ़िल्मी दुनिया के विविध पहलू इन कहानियों में पूरी शिद्दत के साथ उपस्थित हैं। ये कहानियाँ एक सकारात्मकता के साथ जिजीविषा को नए तरीके से प्रस्फुटित करती हैं।

संग्रह की पहली कहानी है 'तुम उदास क्यों हो?' इस कहानी को लिखने में लेखिका ने अपने प्रोफेशन का भरपूर प्रयोग किया है। यह कहानी पाठक को एक अलग लोक में ले जाती है। कहानी एक तरफ असंगठित कार्य स्थल पर मजदूरों की मनोदशा का वर्णन करती है। प्रतीत होता है मानो यू.पी., और बिहार मजदूर बनाने की फैक्ट्री मात्र हैं। मजदूर लड़का अभिनेत्री लड़की के ख़यालों में इतना खो जाता है कि सपने में लड़की द्वारा दुःख-सुख बाँटना उसे अच्छा लगने लगता है। यहाँ लेखिका ने अच्छा खाका खींचा है।

'स्कूल ट्रिप' कहानी एकल अभिभावक के पारिवारिक अर्थ-तंत्र (बजट) की कहानी है जो इस बात की तरफ ध्यान ले जाती है कि अधिकांश मध्यम-वर्गीय परिवारों का जीवनबीमा और बैंक-कर्ज की किस्तों को निपटाने में ही बीत जाता है। यह कहानी पारिवारिक रिश्तों की पड़ताल भी करती है, जहाँ झूठी इज्जत के लिए पैसा बहाना है तो दूसरी ओर बिना बात का गर्व है। कहानी इंगित करती है कि अभाव में बच्चे इच्छाओं पर नियंत्रण करना सीख जाते हैं और उम्र से पहले समझदार हो जाते हैं।

मौत का भय कितना भयानक होता है, उसी कशमकश को लेकर 'फिर' कहानी लिखी गई है। ओशो कहते हैं- 'मैं मृत्यु सिखाता हूँ'। लोग मृत्यु से भयग्रस्त हैं। इंसान की मंशा होती है कि लोग बीमार व्यक्ति की सुने, लेकिन सुनने वाले कम होते हैं, बात पूरी सुने बिना सुनाने की प्रवृत्ति अधिक लोगों में पाई

जाती है। यह व्यथा इस कहानी में बार-बार व्यक्त हुई है।

'माँ री' कहानी में डायरी शैली की झलक है। यहाँ भी क़िस्त भरने का दर्द झलकता है, बार-बार धन बचाने की चिंता दिखाई देती है। यहाँ पिता के न रहने का दर्द भी उभरता है, मानो लेखिका कहना चाहती हैं- जिसका जीवन में अभाव रहता है, उसकी कीमत रहती है। कहानी हमें बताती है कि माँ का सही-सही आकलन उसके बच्चे ही करते हैं। कहानी हमें एक अलग एंगल पर ले जाती है जब लड़की कहती है- 'मुझे पहले अपनी माँ का ब्याह करना है'। ऐसे ही 'बहन जी' कहानी में रिश्तों की शिकायतों का पिटारा है। यह संस्मरणात्मक शैली में लिखी कहानी है जिसमें चिट्ठी, शिकायतें, टोकाटाकी, जलन इतनी ऊँचाई तक जाती हैं तब लेखिका कह उठती है- '...आपसे पूछूँगी कि मेरी होशियारी, मेरी समझदारी, मेरे गुणों को ही आप मेरा दोष क्यों बना देती हैं।' लेखिका की मंशा है कि बड़ों की टोकाटाकी से हम अपनी पसंद तक छोड़ने को विवश हो जाते हैं। लेखिका बड़ी बहन से बहुत से सवाल करना चाहती है लेकिन यह 'पूछना' हमेशा ही रह जाता है, बस लेखिका के हिस्से एक अफ़सोस ही आता है। बड़ी बहन का चरित्र कुछ यूँ उभरता है कि लेखिका का बड़ी होकर अमीर बनने का कथन भी टोंटिंग के रूप में सामने आता है जब वह कहती है- '...अभी तक अमीर नहीं बनी, छोटी होती कहा करती थी कि अमीर बनना है।' 'माँ री' कहानी का दर्द इस कहानी से मेल खाता है। लेखिका के मन की, विदेश जाकर न बस पाने की एक अलिखित टीस भी इस कहानी में उभरी है। 'मज़बूरी' कहानी भी फ़िल्मी सेट, शूटिंग के समय को दर्शाती है। यहाँ का शोषण कहानी में स्वाभाविक रूप से उभरता है, जिसमें लेखिका को अतिरिक्त प्रयास नहीं करने पड़ते। कहानी में करुणा निल्हानी और नीति का चरित्र खूब उभरा है।

कुलबीर की कहानियाँ परिवारिक कहानियाँ हैं। यहाँ बहन है, भाई है, सास है, ससुर है। 'सास-बहू' कहानी के माध्यम से कुलबीर ने कहना चाहा है- 'न उम्र की सीमा हो, न जन्म का हो बंधन...न तब सजना-संवरना भी अच्छा लगता है। हरबंस और सरदार गुरनाम सिंह का प्रेम अनूठा है, सास-ससुर के प्रेम से जलन होने पर बहू कह उठती है- 'क्या फायदा इतने रोमांस का, जब एक रोमांटिक लड़का पैदा न कर सकें।' रोमांस से महरूम होने के चलते बहू की मानसिक स्थिति को भाँप ससुर उसका फायदा उठाता है, चोट लगना और गर्म दूध को यहाँ सिम्बोलिक तरीके से कुलबीर इस्तेमाल करती हैं। परिणति यह होती है कि सास-बहू की खुशखबरी एक ही वक़्त की होती है, साँझी भी है। 'आक्रोश' कहानी में एपिसोड सूट होने की पूरी प्रक्रिया को लेखिका चित्रित करती हैं। कहानी विवाहेत्तर प्रेम-प्रसंगों का खुलासा करते हुए आगे बढ़ती है, लेखिका इस कहानी में पुरुष की फरेबी मानसिकता को एक वाक्य से प्रकट करती हैं- 'तू मेरे पास नहीं होती तो भी मेरे पास होती हो, ...तूने तो मुझे जीना सिखा दिया।' घर तोड़ू स्त्रियों पर व्यंग्य कसते हुए वे लिखती हैं- '...उन्हें पति से वंचित करके वहाँ एक अधूरापन भर दो... एक शून्य भर दो... एक ऐसा खालीपन जो कभी भरा न जा सके....।' यहाँ लेखिका सभी पीड़ित स्त्रियों के दर्द की बयानी करती हैं। 'बक बक' ड्राईवर पर लिखी एक हलकी-फुलकी कहानी है। 'दो औरतें' औरतों की आपसी रिश्तों की कहानी है, जिसमें वह पति की बेवफाई पर चर्चा करती हैं। इस कहानी में कुछ वाक्य आधार-वाक्य बने हैं,

यथा- शादी निभे न निभे, पर वह बच्चों को छाती से लगाकर रखती हैं। मैं एक गृहस्थ जीवन जीना चाहती थी, एक आम साधारण जीवन जैसा स्त्रियों का होता है, बहुत आवश्यक होता है प्रोफेशनल होना, कभी जगह बदलने से किस्मतें भी बदली हैं? आदि।

कुलबीर की कहानियों में गुस्सा, नाराजगी और रिश्तों का तनाव अधिक दिखाई देता है। एक बात और उनकी अधिकांश कहानियों में पिता की नौकरी, उनका तबादला साथ-साथ चलते हैं। लेखिका के पिता खुद सरकारी अधिकारी रहे, शायद यह सब उनके निजी अनुभवों के कारण दृष्टिगत हुआ है। उनकी कहानियों में इंग्लैण्ड, कैनाडा, अमेरिका बहुतायत में हैं लेकिन ऐसा लगता है इन देशों को भारत में बैठकर देखा गया है। उन जगहों की खुशबू यहाँ सिरे से गायब है। कहानियों में जिन जगहों का जिक्र हो अगर वहाँ के कल्चर, वहाँ की भाषा, उस जगह के चरित्र से लेखक रूबरू नहीं है यानि वर्णन शोधपरक नहीं है तो कहानी वह प्रभाव नहीं छोड़ पाती जो उसे छोड़ना चाहिए। लेखिका को इसपर संज्ञान लेने की जरूरत है। एक और महत्वपूर्ण बात है- लेखिका अधिकांश कहानियों में अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग बहुतायत में करती हैं, जिसके लिए उनकी भाषा में सहज शब्द हैं, यहाँ अनुवादक से भी सवाल होना चाहिए कि हिंदी में अनूदित कहानियों में अंग्रेजी शब्दों के हिंदी शब्द न लिखने के पीछे उनकी मंशा क्या रही? ऐसे शब्दों की भरमार इन कहानियों में है, यथा- एयरपोर्ट, मार्किटों, मैश, एडमिट, इंटेलिजेंट, सैटिल, टीचर, परसेंटेज, ओपन, डे, कांफिडेंस, एप्रिसियेट, एन्जॉय, गेम, प्रोफेशन, आर्टिस्ट, पैशन, जॉब सेटिस्फेक्शन, मेकअप रूम, मेट, वर्किंग होस्टल, स्टार, हिट, ऐड, अंडर रेटिड, मेन स्ट्रीम, वन-फोर्थ, एक्नोलिज, शो, बिजी, डेट्स, एक्सेंट, नोटिस, पैरेलल, टाइम, मॉडर्न, प्राइवेट, नम्बर वन, प्रोग्राम, सीन, रीशूट, ग्रेस पीरियड, टेक्नीशियनों, सॉफ्ट-कार्नर, चैलेंज, स्ट्रेस, इंट्रोडक्शन, इंटेलिजेंट, डाउन टू अर्थ, लैंग्वेज, कमांड, कालेजियेट, प्लेटों, स्लॉट, लंडन आदि। ऐसा नहीं है कि इन सब शब्दों के इस्तेमाल से नहीं बचा जा सकता था, सवाल है कि अनुवादक को क्या इतनी छूट नहीं मिलनी चाहिए कि वह अनूदित कृति में लक्ष्य भाषा के शब्द लें, भले ही मूल लेखक ने अंग्रेजी शब्दों का बहुतायत प्रयोग किया हो।

कथ्य और पात्रों का चरित्र चित्रण, वातावरण निर्माण या संवाद के स्तर पर बात की जाए तो यहाँ कुलबीर सभी तत्वों का समुचित व सार्थक प्रयोग करती हैं। इन कहानियों की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इनमें कहीं ठहराव या बोझिलपन नहीं है। पाठक की उत्सुकता को बनाए रखने में लेखिका पूरी तरह कामयाब हुई हैं। वे मानवीय आवेग को तन्मयता के साथ प्रयुक्त करती हैं। उसके पात्र हमें अपने आसपास महसूस हो सकते हैं। कुलबीर की कहानियों के पात्र संजीदा हैं जिनका चित्रण पाठक को स्तब्ध करता है। आधुनिक बोलचाल की भाषा के साथ लिखी सहज सरल अभिव्यक्ति वाली कहानियों का यह संग्रह पठनीय बन पड़ा है। पंजाबी से इन कहानियों का हिंदी में अनुवाद करके एक पुस्तक हिंदी पाठकों को सुपुर्द करने के चलते कथाकार सुभाष नीरव बधाई के पात्र हैं। सभी कहानियों के कथानकों की विविधता, लेखक के विस्तृत अनुभव, प्रकांड ज्ञान व अत्यंत सूक्ष्म निरीक्षण शक्ति का परिचय देती है। लेखिका अपने खुले नेत्र, संवेदनशील हृदय और सक्रिय कलम से अपनी रचनाओं में स्मरणीयता के साथ-साथ पठनीयता जैसे गुणों

को जन्म देकर पंजाबी जगत के साथ-साथ हिंदी-जगत के सुधी पाठकवृंद को बरबस अपनी ओर आकर्षित करने में सफल हैं। भाषा और शिल्प की बात की जाए तो हम पाते हैं कि लेखिका ने कहानी के लिए किसी विशेष शिल्प को नहीं अपनाया। उनकी कथा कहने की शैली इतनी सरल और सहज है कि उनके पात्र बड़े ही सहज-सरल शब्दों में संवाद करते हैं। लेखिका जो भी जैसा भी घटते हुए देखती है, उन घटनाओं से बड़ी आसानी से कथा बुनती चलती है। वाक्य-विन्यास एकदम सहज है और संवाद कथा की माँग के हिसाब से ही प्रयुक्त किए गए हैं। कुल मिलाकर कहानियाँ पठनीय हैं।

तुम उदास क्यों हो? (कहानी संग्रह)/ कुलबीर बड़ेसरों (हिंदी अनुवाद : सुभाष नीरव)/ नीरज बुक सेंटर, पटपड़गंज, दिल्ली/ 2023/ रु: 200 /-

D-2/1, Jeevan Park, Uttam Nagar, New Delhi - 110059

बूझो तो जानो

वर्ग पहेली

निम्नलिखित शब्दों के विलोम ढूँढ़िए

नया, छोटा, सुंदर, हानि,
दिन, अपना, उपेक्षा,
ज़्यादा, कायर,
ठोस, मृत्यु,
अमीर

('हिंदी प्रचार समाचार' डेस्क)

कु	रू	प	त	र	ल	अ
स	ह	पु	रा	ना	क्ष	पे
ब	ड़ा	अ	म	या	क	क्षा
ड	ठ	ला	भ	इ	ट	ग
च	क	म	जी	व	न	री
नि	ड	र	ब	ख	ल	ब

- लोक साहित्य = लोक जीवन की अभिव्यक्ति
- लोककथा के तत्व = रोचकता, किस्सागोई, प्रभावात्मकता, यथोचित संबद्धता, मनोरंजन और लोकजीवन
- लोकसाहित्य के प्रकार = लोक गीत, लोक गाथाएँ, लोककथाएँ, लोक नाट्य, लोक नृत्य, लोक खेल
- लोककथाएँ समय तथा पीढ़ियों के साथ बदलती हैं।
- लोकसाहित्य में पारंपरिक सामाजिक ज्ञान भरा रहता है।

प्रचारक तथा परीक्षार्थियों की सुविधा के लिए...

परीक्षा प्रमाण पत्र संबंधी जानकारी तथा अन्य सभी आवश्यक विवरण प्राप्त करने के लिए केंद्र सभा के परीक्षा विभाग का WhatsApp No. 8124333004 उपलब्ध है। **- परीक्षा सचिव**

विष्णु प्रभाकर कृत 'भीम और राक्षस' का कथा सार

- डॉ. गुर्रमकोंडा नीरजा

प्रस्तावना : प्रिय छात्रो! आप विष्णु प्रभाकर का एकांकी 'भीम और राक्षस' पढ़ने जा रहे हैं। 'महाभारत' का एक प्रसंग है बकासुर वध। इसे आधार बनाकर विष्णु प्रभाकर ने 'भीम और राक्षस' नाम से एकांकी का सृजन किया है। आप इसी एकांकी का कथा सार पढ़ने जा रहे हैं।

प्रिय छात्रो! 'महाभारत' का एक चरित्र था बकासुर। वह एक राक्षस था। जब पांडव और कुंती एकचक्र नगरी में रह रहे थे, उस दौरान पांडु पुत्र भीम ने बकासुर का वध किया और गाँव वालों को उस राक्षस से मुक्ति दिलाई। आइए! इस एकांकी के रचनाकार और कथावस्तु की जानकारी प्राप्त करेंगे।

एकांकीकार का परिचय : विष्णु प्रभाकर हिंदी साहित्य के ख्याति प्रसिद्ध साहित्यकार हैं। उनका जन्म उत्तर प्रदेश के मुजफ्फरनगर जिले के गाँव मीरापुर में 21 जून, 1912 को हुआ। उनके पिता दुर्गा प्रसाद धार्मिक विचारों वाले व्यक्ति थे। उनकी माता महादेवी पढ़ी-लिखी महिला थी। उसी जमाने में उन्होंने पर्दा प्रथा का विरोध किया। विष्णु प्रभाकर की आरंभिक शिक्षा-दीक्षा मीरापुर में हुई। घर की आर्थिक स्थिति ठीक न होने के कारण उन्हें गृहस्थी चलाने के लिए सरकारी नौकरी करनी पड़ी। उनपर महात्मा गांधी के सिद्धांतों का गहरा प्रभाव दिखाई देता है। उनकी प्रमुख कृतियाँ इस प्रकार हैं- (उपन्यास) ढलती रात, स्वप्नमयी, अर्धनारीश्वर, क्षमादान, दो मित्र, पाप का घड़ा, होरी। (नाटक) हत्या के बाद, नव प्रभात, डॉक्टर, प्रकाश और परछाइयाँ, बारह एकांकी, अशोक, अब और नहीं, टूटते परिवेश। (कहानी संग्रह) संघर्ष के बाद, धरती अब भी घूम रही है, मेरा वतन, खिलौने, आदि और अंत। (आत्मकथा) पंखहीन नाम से उनकी आत्मकथा तीन भागों में राजकमल प्रकाशन से प्रकाशित हुई है। (जीवनी) आवारा मसीहा (कथाकार शरतचंद्र के जीवन पर आधारित)। (यात्रा वृत्तांत) ज्योतिपुन्ज हिमालय, जमुना गंगा के नैहर में।

भीम और राक्षस की संक्षिप्त कथावस्तु : महाभारत की कथा के अनुसार कुंती सहित पंच पांडव अपने वनवास के दौरान एकचक्र नगरी में एक गरीब ब्राह्मण के घर में अतिथि के रूप में आश्रय पाते हैं। ब्राह्मण के वेश में वे वहाँ ठहरे और भिक्षाटन करके जीवन यापन करते थे। उस समय घटित घटना का चित्रण है।

गरीब ब्राह्मण का घर। एक दिन उस घर से जोर-जोर से रोने की आवाज आ रही थी। कुंती उनकी बातचीत को ध्यान से सुनने लगी। सभी रो-रोकर अपने प्राण देने की बात कर रहे थे। कुंती से यह सहा नहीं गया। वे उनके पास जाकर पूछने लगती हैं कि क्या हुआ। कोई कुछ नहीं बोलते, उसी तरह रोते रहते हैं। इतने में भीम रोना बंद करके बात बताने के लिए कहता है। तब ब्राह्मण कहता है, 'मेरा भाग्य फूट गया। इससे कहता रहा, चल इस एकचक्र नगरी को छोड़कर कहीं और चलें; पर यह तो यहाँ की मिट्टी में ऐसी रम गई कि जाने का नाम नहीं लिया। अब भुगतेगी, मेरा तो बुलावा आ गया'। यह सुनकर कुंती पूछती हैं कि कहाँ से बुलावा आया है। बहुत पूछने पर ब्राह्मण कहता है कि उस नगरी का राजा बहुत दुर्बल था। वह

तो बस गद्दी पर बैठना जानता था। उस राजा को दबाकर बक राजा बन बैठा। वही सबकी रक्षा करता है। इसके बदले उसे एक गाड़ी अन्न, दो भैंस और एक मनुष्य को भोज के रूप में देना होता है हर रोज। उस नगर के लोगों ने सब मिलकर बारी बाँध ली थी। जब जिसकी बारी आती है, तब उसे यह सब सामान लेकर राक्षस बकासुर के पास पहुँचना होता है। लोग अपनी-अपनी बारी भुगतते थे। नहीं तो वह राक्षस हजारों मनुष्य को एक साथ निगल जाता था।

सब लोग एक-एक परिवार से बारी-बारी लगाते हैं। यह चालीस सालों से ऐसा होता आ रहा है। अब इस ब्राह्मण परिवार की बारी है। जब भीम कहता है कि अपने स्थान पर किसी और को भी तो भेजा सकता है, तो ब्राह्मण जवाब देता है कि ऐसा किया जा सकता है, क्योंकि बक को तो आदमी चाहिए। बहुत-से लोग ऐसा करते भी हैं। कुंती के पूछने पर ब्राह्मण कहता है कि यहाँ आदमी बिकते हैं। पर खरीदने के लिए धन भी तो चाहिए। इस बात पर आश्चर्य व्यक्त करते हुए भीम कहता है कि यह जगह तो विचित्र है। लगता है कि यहाँ आपसी प्रेम और एकता नहीं है।

कुंती को यह सब जानकर बहुत दुख होता है। वे पूछती हैं आखिर ऐसा कब तक चलता रहेगा? भीम पूछता है कि क्या चालीस वर्षों में ऐसा कोई आदमी सामने नहीं आया जो उस राक्षस को पाठ पढ़ा सकता। कुंती कहती हैं कि ब्राह्मण के घर से राक्षस के पास कोई नहीं जाएगा। यह सुनकर जब ब्राह्मण आश्चर्य व्यक्त करता है और पूछता है कि कौन जाएगा तो कुंती कहती हैं कि 'मेरा यह बेटा, मेरे तो पाँच बेटे हैं न! तब ब्राह्मणी यह कहकर मना करती हैं कि 'पाँच बेटे हैं तो क्या राक्षस के लिए हैं?' कुंती उन्हें समझाती हैं और भीम भी कहता है कि वह बकासुर के पास जाने के लिए तैयार है। वह अपने पुत्र भीम को बकासुर के पास भेजती हैं। गाड़ी लेकर भीम बकासुर से मिलने वन में जाता है। वह मस्ती में शोर मचाता है। बकासुर के लिए ले गए अन्न वह खुद खाने लगता है। यह देखकर बकासुर आग बबूला हो जाता है। गुस्से में आ जाता है। बकासुर भीम को भैंस जैसा लगता है। वह बकासुर को चुनौती देता है। भीम बकासुर का गला पकड़ता है तो वह चीखता है। भीम जोर लगाता है और बकासुर की आँखें फट जाती हैं। भीम जोर से उसे धरती पर पटक देता है और चीर देता है। एक भयंकर चीख के साथ राक्षस मर जाता है। जोर का शोर उठता है। सभी अन्य राक्षस दौड़ते हुए आते हैं। भीम को देखकर भयभीत हो उठते हैं। भीम उन्हें चेतावनी देता है कि आगे वे गाँव वालों को कभी तंग नहीं करेंगे। उनसे लाश ले जाकर नगर के दरवाजे पर रख देने के लिए कहता है ताकि सब गाँव वालों की नजर पड़ जाए। इस तरह भीम बकासुर का अंत करता है। इस एकांकी का संदेश यह है कि दानवता पर मानवता की जीत। अच्छाई के सामने बुराई की हार।

बोध प्रश्न

- ब्राह्मण के घर में सब लोग क्यों रो रहे थे?
- भीम क्यों कहता है कि यह अजीब जगह है?
- कितने वर्षों से बकासुर आदमियों को खा रहा था?
- भीम बकासुर का क्या करता है?

Co-Editor, 'Hindi Prachar Samachar', Associate Professor,
Post Graduate & Research Institute, DBHPS, Chennai - 600017

मैथिलीशरण गुप्त के साहित्य में सद्भावना

- डॉ. एम. लोकनाथन

काव्य में रवीन्द्रनाथ टेगौर की परंपरा का भारत के सभी कवियों ने अनुसरण किया है। मैथिलीशरण गुप्त महावीर प्रसाद द्विवेदी के शिष्य के रूप में रवीन्द्रनाथ टेगौर से काफी प्रभावित थे। 'रवीन्द्रनाथ टेगौर रचित 'काव्य की उपेक्षिताएँ' शीर्षक दीर्घ निबंध से प्रभावित होकर उन्होंने 'यशोधरा' चम्पू काव्य और 'साकेत' महाकाव्य का प्रणयन किया है जिसमें सामाजिक सद्भावना के आंशिक खण्डित रूप को पूरा करने का प्रयास किया गया है।

कवि मैथिलीशरण गुप्त यशोधरा के संबंध में कहते हैं- 'अबला! जीवन हाय! तुम्हारी यही कहानी, आँचल में है दूध और आँखों में पानी। 'तो इस सत्य को ही सिद्ध करना चाहते हैं जिसे उन्होंने स्वयं द्वापर काव्य में स्वीकार किया था, यथा- 'नर से दो-दो मात्राएँ भारी नारी'। गुप्त जी अपने सर्वधर्म समन्वयवाद से लेकर मानववाद तक को काव्य में निरूपण करते हैं। वे कहते हैं- 'मानते हैं, जीवन को जो अर्थ ही/ अर्थहीन होकर वे बनाते हैं व्यर्थ ही।'

'शुभकामना' शीर्षक कविता में देश को रक्त प्रदान करने की प्रार्थना करते हैं और पुण्य के बारे में कवि 'सैरंध्री' में कहते हैं- 'पुण्य वही जो बहुजन का सदा से हित करे। / समय के साथ जिसका सदा संगत रहे।

'सुकवि संकीर्तन' में कवि अपने सहकर्मियों के लिए कहते हैं- केवल मनोरंजन कवि का कर्म नहीं होना चाहिए।/ उसमें उचित उपदेश का भी मर्म होना चाहिए। सद्भावना उपदेशों की सरणी निसृत निर्झरिणी है।

कवि प्रतिभा के स्वधर्म के बारे में कहते हैं- है प्रतिभा का काम लोकहित करना/ सद्भावों से मन मनुज मात्र का भरना।

कभी-कभी सद्भावना पारिवारिक, सामाजिक या जातीय चेतना में समाप्त हो जाती है। ऐसी कविताएँ व्यक्तिगत वीरता को लक्षित कर सकती हैं। मगर, मानव मात्र के सुख और समृद्धि की ओर उसका ध्यान नहीं जाता।

राष्ट्रप्रेम से विश्वप्रेम बड़ा होता है। राष्ट्रीय-संस्कृति के जागरण से विश्व संस्कृति का जागरण बेहतर होता है क्योंकि सद्भावना का अंतिम स्वरूप वही है। 'विश्वराज्य' शीर्षकवाली अपनी कविता में कवि कहते हैं- 'जन्म भूमि यदि अलग तुम्हारी/ तो हम भी लौहयुद्धबारी।/ फिर होगा कैसे इस विग्रह का परिहार/ कहो, तुम्हारी जन्मभूमि का है कितना विस्तार।' इस आधुनिक मनोधारणा का द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद जो परिवर्तन हुआ था उसका निरूपण कवि मैथिलीशरण गुप्त पहले से करते आए हैं। वास्तव में वे सृजनात्मक साहित्यकार थे।

भारतीय साहित्यिक परंपरा में जो शुद्ध सद्भावनात्मक चेतना निस्पंदित हुई है, उसको आपने प्रतिपादित किया है। नारी के प्रश्न को लेकर 'पंचवटी' काव्य में कवि का स्पन्दन देख सकते हैं- 'नर कृत शास्त्रों में अब बंधन हैं नारी को ही लेकर।'

'किसान' नामक कविता में आप कहते हैं- 'जिस कृषि से सब जगत आज भी हरा भरा है,/ क्यों उससे इस भाँति हमारा हृदय डरा है?/ कृषि ने होकर विवश कड़ा कर आज वरा है,/ हम कृषकों के लिए रही बस शून्य धरा है।'

भारतीय सब मेरे बंधु हैं- यही गुप्त जी का संदेश रहा। समानता सद्भावना पर आधारित है- इस बात को कवि ने कई जगहों पर प्रकट किया है। विशेषकर 'साकेत' के छठे सर्ग में सीता के उद्गार, 'मेरी कुटिया में राजभवन मन भाया' के क्रम में यही बात प्रतिपादित की गई है। ऊर्मिला के मिलन और विरह दोनों दशाओं के वर्णन में कवि मैथिलीशरण गुप्त ने शिल्प-कौशल के साथ सद्भावना को अंकित किया है।

गुप्त जी ने अपनी रचनाओं में स्थाई मूल्यों का प्रतिपादन किया है। राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त अपनी रचनाओं में भारतीय संस्कृति को अक्षुण्ण रखा। भारतीय संस्कृति के आदर्श को उनके साहित्य में देखा जा सकता है। मानवतावाद, राष्ट्रप्रेम, समाज सुधार, नारी के प्रति सद्भाव आदि उनके काव्य की विशेषताएँ हैं।

No. 17, NSC II Cross Street, Venkatapuram, Ambathur, Chennai - 600053

प्रचारकों के ध्यानार्थ
सभा द्वारा संचालित ऑनलाइन वर्ग

(1) **बोलचाल हिन्दी - प्रारंभिक 30 वर्ग - 1½ घंटे प्रति वर्ग**
सोम, बुध, शुक्र - सायं - 07.00 - 08.30
जनवरी-मार्च; अप्रैल-जून; जुलाई-सितंबर, अक्तूबर-दिसंबर

(2) **बोलचाल हिन्दी - उच्च श्रेणी 30 वर्ग - 1½ घंटे प्रति वर्ग**
मंगल, गुरु, शनि - सायं - 07.00 - 08.30
जनवरी-मार्च, अप्रैल-जून, जुलाई-सितंबर, अक्तूबर-दिसंबर

(3) **ऑनलाइन अनुवाद - 10 वर्ग**
प्रति रविवार - सायं - 05.00 - 08.00
जनवरी-मार्च, अप्रैल-जून, जुलाई-सितंबर, अक्तूबर-दिसंबर

विवरण के लिए सभा का वेबसाइट - **www.dbhpscentral.org** देखें।

प्रधान सचिव

प्रचारक कृपया ध्यान दें!

आगामी फरवरी 2024 से प्राथमिक परीक्षा प्रश्न-पत्र में परिवर्तन होगा।

नमूना प्रश्न-पत्र नीचे दिया जा रहा है।

प्राथमिक

PRATHAMIC

सफ़ाई के अंक : 5

समय : 2½ घंटे **पूर्णांक : 100**

1. किन्हीं पाँच प्रश्नों के उत्तर एक-एक वाक्य में लिखिए :- **10**

(1) मेज़ और कुर्सी कहाँ हैं?
(2) कमला कहाँ है?
(3) क्या आप वकील हैं?
(4) भूपाल क्या खाता है?
(5) कुत्ता क्या खाता है?
(6) रवि और करीम कहाँ खेलते हैं?
(7) दिनेश कहाँ से कलम लाता है?
(8) बाग में कौन हैं?
(9) इस घर में कितने कमरे हैं?
(10) रेलगाड़ी के आगे क्या है?

2. किन्हीं चार को अक्षरों में लिखिए :- **4**

(1) 7 (2) 16 (3) 25 (4) 30
(5) 34 (6) 50 (7) 1¾ (8) 49

3. किन्हीं दो पद्यों का भावार्थ प्रांतीय भाषा में लिखिए :- **10**

(1) निंदा किसी की हम
किसी से भूलकर भी न करें,
ईर्ष्या कभी भी हमे
किसी से भूलकर भी न करें,
हे प्रभु! आनंद-दाता
ज्ञान हमको दीजिए।

(2) धनवान बनो, गुणवान बनो
तुम ज्ञानी और महान बनो
तुम धीर बनो गंभीर बनो
तुम सभ्य सुशील, सुजान बनो।

(3) बिना रुके चलते जाओ तो
तुम्हें लक्ष्य मिल जाएगा
अगर ईंट पर ईंट धरो तो
महल खड़ा हो जाएगा।

(4) माँ-बाप,
भाई-बहन संग अंग बढ़े,
हँसना-रोना सीखा,
खेलना-बोलना सीखा।

(5) दीपक से सीखो
जितना हो सके अंधेरा हरना
पृथ्वी से सीखो
प्राणी की सच्ची सेवा करना।

4. किसी एक दोहे का कंठस्थ रूप ज्यों का त्यों लिखिए :- **4**

(1) जाति न पूछो .... रहन दो म्यान।।
(2) तरुवर फल नहीं .... संपत्ति सँचहिं सुजान।।
(3) तुलसी मीठे .... वचन कठोर।।

5. किन्हीं तीन का अर्थ प्रांतीय भाषा में लिखिए :- **3**

(1) अनाज (2) बीमारी (3) सीप (4) फुलवारी
(5) जानवर (6) भौंकना (7) कतार (8) मंजिला

6. किन्हीं तीन के विलोम शब्द लिखिए :- **3**

(1) खरीदना x (2) नया x (3) सुंदर x (4) अच्छइ्ञ x
(5) समझदार x (6) कीमती x (7) जल्दी x (8) बिकना x

7. किन्हीं चार वाक्यों को 'सही' या 'गलत' लिखिए :- **4**

(1) आभूषण बनानेवाले को बढ़ई कहते हैं। (2) स्वस्थ शरीर में स्वस्थ मस्तिष्क रहता है।
(3) 'बी' विटामिन की कमी के कारण आदमी बात-बात पर गुस्सा करता है।
(4) चट्टान पर संत तिरुवल्लुवर की मूर्ति स्थापित है।
(5) देवी कन्याकुमारी का मंदिर नया है।

8. किन्हीं चार के कोष्ठक से सही शब्द चुनकर खाली जगह भरिए :- **4**

(1) स्कूल के आगे छोटी-सी .... है। (फुलवारी/तालाब)
(2) कुत्ता .... जानवर है। (बड़ा/वफ़ादार)
(3) छात्र .... के खेल खेलते हैं। (कुछ/तरह-तरह)
(4) बिल्ली .... को पकड़ता है। (चूहे/कुत्ते)
(5) गाय बड़ी .... होती है। (सीधी-सादी/ कठोर)

9. निम्नलिखित वाक्यों को जोड़िए :- **4**

(अ)		(आ)
(1) स्कूल के आगे	–	सब तरह की तरकारियाँ मिलती हैं।
(2) शाम को छात्र	–	बड़ा मकान।
(3) सब्जी की मंडी में	–	मैदान में खेलते हैं।
(4) नया बाज़ार	–	फुलवारी है।

10. किन्हीं चार की खाली जगह भरिए :- **4**

(1) बाज़ार यहाँ से .... दूर है।
(2) .... की दूकानें अलग हैं।
(3) .... गाँधीजी सन् .... में भारत लौट आये।
(4) .... ने गाँधीजी को राष्ट्रपिता कहा।
(5) .... ने उनको महात्मा की उपाधी दी।

11. किन्हीं चार शब्दों का प्रयोग वाक्यों में कीजिए :- **8**

(1) पुत्र (2) मोड़ (3) अलग-अलग (4) जोतना
(5) होशियार (6) लड़ाई (7) बिकना (8) अहिंसा

12. किन्हीं चार प्रश्नों के उत्तर एक-एक वाक्य में लिखिए :- **8**

(1) बढ़ई हमारे लिए क्या बनाते हैं? (2) कैलरी किसे कहते हैं?
(3) कन्याकुमारी का पुराना नाम क्या है? (4)लड़के कितने बजे घर जाते हैं?
(5) कुत्ते के बारे में तीन वाक्य लिखिए। (6) घोड़े से क्या-क्या फायदे होते हैं?
(7) नये बाज़ार में कौन-कौन-सी दूकानें हैं? (8)गाँधीजी को दक्षिण आफ़्रिका में क्या अनुभव हुआ?

13. किन्हीं दो प्रश्नों के उत्तर तीन-तीन वाक्यों में लिखिए :- **8**

(1) गाय के बारे में तीन वाक्य लिखिए। (2) गांधीजी के बारे में तीन वाक्य लिखिए।
(3) हाथी के बारे में तीन वाक्य लिखिए। (4) कपड़े की दूकानों में क्या-क्या चीज़ें मिलती हैं?

14. किसी एक कहानी का सारांश लिखिए :- **8**

(1) कवि और कंजूस (2) एकता का फल (3) दूध में पानी

15. किन्हीं पाँच वाक्यों का अनुवाद प्रांतीय भाषा में कीजिए :- **5**

(1) आप यहाँ आइए। (2) मैं पाठशाला जाता हूँ। (3) तुम क्या लिखते हो?
(4) पिताजी खत लिख रहे हैं। (5) सीता ने चार आम खरीदे। (6) बालक ने चाँद को पकड़ना चाहा।
(7) नेताजी भाषण दे चुके। (8) मुझे एक कलम चाहिए।

16. किन्हीं चार वाक्यों का अनुवाद हिन्दी में कीजिए :- **8**

(1) Take this paper. இந்தக் காகிதத்தை எடுத்துக்கொள்.
(2) Gopal is playing in the playground.
கோபால் மைதானத்தில் விளையாடிக் கொண்டிருக்கிறான்.
(3) We shall work in the garden. நாங்கள் தோட்டத்தில் வேலை செய்வோம்.
(4) When did you reach Kolkatta? நீ கொல்கத்தா எப்பொழுது போய்ச் சேர்ந்தாய்.?
(5) The horse ran fast. குதிரை வேகமாக ஓடியது.
(6) How many Chappathies did you eat? நீ எத்தனை ரொட்டிகள் சாப்பிட்டாய்?
(7) I wanted to buy a mirror. நான் ஒரு முகம் பார்க்கும் கண்ணாடி வாங்க விரும்பினேன்.
(8) He can do this work. அவனால் இந்த வேலையைச் செய்ய முடியும்.

*****

नमूना प्रश्न-पत्र

नया पाठ्यक्रम / NEW SYLLABUS

दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा, मद्रास

अगस्त, 2023

प्रवेशिका –1
PRAVESHIKA–1

समय : 3 घंटे] **[पूर्णांक : 100**

1. किन्हीं पाँच प्रश्नों के उत्तर एक या दो वाक्यों में लिखिए :- **10**

1) यशोधरा के दुख का प्रमुख कारण क्या है?
2) 'अभी न होगा मेरा अंत' कविता के रचयिता कौन हैं?
3) 'अगणित लघु दीप' यह उदाहरण किनको सूचित करता है?
4) पंत जी के अनुसार शांति अधिष्ठाता कौन है?

5) कवि सुमतींद्र के अनुसार पुराने पत्ते (वृद्ध लोग) क्या करते हैं?
6) कवि डॉ. सुब्रहमण्यन 'विष्णुप्रिया' किसको राष्ट्रप्रेम की मधुरवाहिनी कहते हैं?
7) 'जीव-प्रदीप' में पक्षि-संकुल क्या गा रहा है?
8) हज़ारों नदियाँ कहाँ खेलती हैं?

2. किसी एक कवि का परिचय दीजिए :- **5**

1) मैथिलीशरण गुप्त 2) माखनलाल चतुर्वेदी 3) कैफ़ी आज़मी

3. किसी एक कविता का सारांश लिखिए :- **10**

1) यशोधरा का विलाप 2) भारत गीत 3) जीव-प्रदीप

4. किन्हीं दो पद्यांशों का संदर्भ सहित भाव समझाइए :- **10**

1) पुष्प-पुष्प से तन्द्रालस लालसा खींच लूँगा मैं
अपने नवजीवन का अमृत सहर्ष सींच दूँगा मैं
द्वार दिखा दूँगा फिर उनको
हैं मेरे वे जहाँ अनन्त
अभी न होगा मेरा अंत।

2) ये शिखर, ये अँगुलियाँ उठीं भूमि की
क्या हुआ, किसलिए तिलमिलाने लगी
साँस क्यों आस से सुर मिलाने लगी
प्यास क्यों त्रास से दूर जाने लगी।

3) पीले पत्ते
जीवित हैं झड़ने को
खड़ खड़ सर सर
शोर हैं करते-
"हम पुराने हैं
हम व्यतीत हैं
हम पके हैं
हम नव वसंत लाएँगे।"

4) मेरे भीतर ही भीतर न जाने कब से-
संघर्ष उठ रहा है, जिसको रोक पाने की शक्ति
धरती पर अभी तक
पैदा नहीं हुई है।

5. किन्हीं दो पद्यांशों का संदर्भ सहित भाव समझाइए :- **10**

1) मज़हब नहीं सिखाता, आपस में बैर रखना।
हिन्दी हैं हम, वतन हैं, हिन्दोस्तां हमारा।।
यूनान-ओ-मिस्त्र-ओ-रोमा, सब मिट गए जहाँ से।
अब तक मगर है बाक़ी, नाम ओ-निशाँ हमारा।।

2) राह कुर्बानियों की न वीरान हो,
तुम सजाते ही रहना नए काफ़िले,
फ़तह का जश्न इस जश्न के बाद है,
ज़िंदगी मौत से मिल रही है गले।।

3) राजकाज सब लाज पति धरम धरनि धन धाम।
गुर प्रभाउ पालिहि सबहि भल होइहि परिनाम।।

4) सो बिचार सहि संकटु भारी। करहु प्रजा परिवारु सुखारी।
बाँटी बिपति सबहिं मोहि भाई। तुम्हहि अवधि भरि बड़ि कठिनाई।।

6. कंठस्थ दोहों को ज्यों का त्यों लिखिए :- **5**

1) काल करे .... करेगा कब।। 2) पावस देखि .... पूछत कौन।।

7. किन्हीं पाँच प्रश्नों के उत्तर एक-दो वाक्यों में लिखिए :- **10**

1) पिता के कृपासागर पर नचिकेता ने क्या कहा? 2) भिखमंगे बच्चों के बाप क्यों जेल गए?
3) महात्मा गाँधी का सपना क्या था?
4) कम्प्यूटर में सबसे पहले किस भाषा के लिए कोड़ निर्मित हुआ?

5) पुराने जमाने में किसे स्त्रियों की भाषा कहते थे?
6) सुभद्रा कुमारी चौहान और महादेवी वर्मा का पहला मिलन कहाँ हुआ?
7) छोटी बालिका ने बैलों के प्रति अपना प्रेम किस तरह दिखाया?
8) लेखक ने अपने फटे पुराने कपड़ों की तलाश क्यों की?

8. किन्हीं तीन प्रश्नों के उत्तर पाँच-पाँच वाक्यों में लिखिए :- 15

1) 'तीन बच्चे' कहानी में विकसित बाल मनोविज्ञान का परिचय दीजिए।
2) बेचारा भला आदमी कौन बन जाते हैं?
3) छोटे जादूगर के खेल के बारे में लिखिए।
4) दो बैलों के बीच की दोस्ती के बारे में लिखिए।
5) लेखक की साइकिल चलाने की सीख में तिवारी जी का योगदान क्या है?

9. किसी एक पाठ का सारांश लिखिए :- 10

1) नचिकेता 2) स्वच्छता अभियान 3) छोटा जादूगर

10. किन्हीं तीन की संदर्भ सहित वियाख्या कीजिए :- 15

1) आत्मा न तो कभी पैदा होती है, न मरती है। वह अजर-अमर है और शरीर के नष्ट हो जाने पर भी विद्यमान रहती है।
2) चोर ही सबसे अधिक इस बात को प्रचार करते हैं कि इस महान देश में पहले लोग घरों में ताले नहीं लगाते थे।
3) व्यक्ति विशेष का चाल-चलन देखकर जाने भी जा सकते हैं।
4) भगवान सबके ऊपर दया करते हैं। उन्हें हमारे ऊपर दया क्यों नहीं आती?
5) 'दुनिया लाख बुरी है, मगर फिर भी भले आदमियों से खाली नहीं है।'

❊ ❊ ❊ ❊ ❊

नमूना प्रश्न-पत्र **नया पाठ्यक्रम / NEW SYLLABUS**

प्रवेशिका – 2

PRAVESHIKA–2

दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा, मद्रास
अगस्त, 2023

समय : 3 घंटे] [पूर्णांक : 100

1. किन्हीं पाँच प्रश्नों के उत्तर एक या दो वाक्यों में लिखिए :- 10

1) भरत श्रीराम से कहाँ मिलता है?
2) श्रीराम पुष्पक विमान में बैठकर कहाँ पहुँचे?
3) बकासुर क्या करता था?
4) भीम ने बकासुर की लाश कहाँ रखने के लिए कहा?
5) कृष्णदास कैसा आदमी था ?
6) गुलनार कौन है?
7) महामाया बेगम को क्या दंड देती है ?
8) जहाँनारा कौन है ?

2. किसी एक पात्र पर टिप्पणी लिखिए :- 5

1) राम 2) वसंत 3) मुमताज

3. किसी एक पात्र का चरित्र चित्रण कीजिए :- 10

1) भरत 2) कुंती 3) महामाया

4. किन्हीं तीन की संदर्भ सहित व्याख्या कीजिए :- 15

1) आप परम सौभाग्यशाली हैं। आप को तो यह सौभाग्य प्राप्त हुआ कि आप महाप्रभु के प्रेम को संसार में सूर्य की भाँति प्रकाशित कर दें। आपके बिना यह किसी से भी संभव नहीं था।

2) अरे, अरे बेटा। इस ब्राह्मण देवता पर क्यों क्रोध करता है? इन्होंने तो हमको शरण दी है।
3) लेकिन ऐसा हरगिज़ न होना चाहिए, कि तुम्हारे दोस्त का एक बाल भी बाँक हो। जाओ, देर बिलकुल न करे।
4) महाराणा, मेरे जात को बुरा न कहें। हमारी जात खराब नहीं है। हम सब कुछ हो सकते हैं, पर नमक हराम नहीं।
5) सेनापति ! इनको बादशाह के पास पहुँचा आओ। खड़ी हुई हो। विस्मय हुआ? राजपूतों का यही बदला है।
6) दीवारें बनाई जाती हैं, ज़िंदों को अलग रखने के लिए - याद और मोहब्बत के सामने दीवार भी कोई अड़चन है? अहमक़ है !!

5. किन्हीं दो पर टिप्पणियाँ लिखिए :- 10

1) माँ-बाप और जन्म 2) हाईस्कूल में 3) धर्मों के प्रति समभाव 4) गीता पढ़ने की प्रेरणा और असर

6. किसी एक का सारांश लिखिए :- 10

1) लड़कपन 2) चोरी और प्रायश्चित 3) तीन प्रतिज्ञाएँ

7. वचन बदलिए :- 5

1) लड़का 2) सड़क 3) मंदिर 4) वस्तु 5) भाषा

8. लिंग बदलिए :- 5

1) बेटा 2) अध्यापक 3) साहब 4) नर 5) कवि

9. एक शब्द में अर्थ लिखिए :- 5

1) जो ईश्वर को न मानता हो 2) जिसके कोई अंग न हो 3) जो कम बोलता हो
4) जिसकी कोई सीमा न हो 5) जिसे भूलने की आदत हो

10. किन्हीं पाँच प्रश्नों के उत्तर एक या दो वाक्यों में लिखिए :- 10

1) भाषा किसे कहते हैं ?
2) शब्द किसे कहते हैं ? किन-किन दृष्टियों से शब्दों का वर्गीकरण किया जाता है ?
3) संज्ञा की परिभाषा दीजिए।
4) 'कोई' और 'कुछ' निश्चयवाचक सर्वनाम हैं या अनिश्चयवाचक सर्वनाम हैं?
5) 'यह तस्वीर पिताजी ने खींची' यह वाक्य कर्तृवाच्य है या कर्मवाच्य?
6) संबंधबोधक की परिभाषा दीजिए। 7) प्रत्यय का दूसरा नाम क्या है ?
8) 'ने' का प्रयोग किस काल में किया जाता है ?

11. किन्हीं तीन प्रश्नों के उत्तर सविस्तार लिखिए :- 15

1) व्याकरण की परिभाषा देते हुए हिंदी व्याकरण के प्रकारों को समझाइए।
2) भूतकाल किसे कहते हैं? भूतकाल के कितने प्रकार हैं और वे क्या-क्या हैं? उदाहरण सहित समझाइए।
3) कारक की परिभाषा क्या है, उसके कितने प्रकार हैं, सोदाहरण समझाइए।
4) विशेषण की परिभाषा देते हुए उसके भेदों को सोदाहरण समझाइए।
5) समास की परिभाषा देकर उसके भेदों को उदाहरण सहित समझाइए ।

*****

Printed by G. Selvarajan General Secratary and published by G.Selvarajan on behalf of Dakshina Bharat Hindi Prachar Sabha (name of owner) G. Selvarajan and printed at Hindi Prachar Press (place of printing) 15-21C Thanikachalam Road, T.Nagar, Chennai-600 017 and published at Dakshina Bharat Hindi Prachar Sabha (place of publication) 15-21CThanikachalam Road, T.Nagar, Chennai-600 017. Editor G.Selvarajan.

दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा, मद्रास

77वें स्वतंत्रता दिवस समारोह : 15 अगस्त, 2023

श्री ए. वेंकटेश्वर राव, लिपिक, पुस्तक बिक्री विभाग : विदाई समारोह - 31 जुलाई, 2023

September, 2023. Regd. No. TN/CH(C)/321/2021-2023

REGISTERED NEWSPAPER

Licenced to Post without Pre-payment No.TN/PMG(CCR)WPP–432/2021-2023

Posted at Egmore RMS-1; Registrar of Newspaper for India under No. 1089/1957

Date of Publication – First week of every month

Posted at Patrika Channel on Dt. 11 th September, 2023

Hindi Prachar Samachar

To

If not delivered, please return to:

Dakshina Bharat Hindi Prachar Sabha,

15-21, Thanikachalam Road, T. Nagar, P.O., Chennai - 600 017.

दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा, चेन्नै - 600 017 की तरफ़ से जी. सेल्वराजन द्वारा प्रकाशित एवं मुद्रित 15-21, तणिकाचलम रोड, टी.नगर, चेन्नै - 600 017 में प्रकाशित एवं मुद्रित। संपादक : जी. सेल्वराजन

Published and Printed by G. Selvarajan on behalf of D.B. Hindi Prachar Sabha, Chennai-600 017.

Published and Printed at 15-21, Thanikachalam Road, T. Nagar, Chennai - 600 017. Editor G.Selvarajan.